चकमक

जनवरी, 2004 | बाल विज्ञान पत्रिका | रु. 10.00

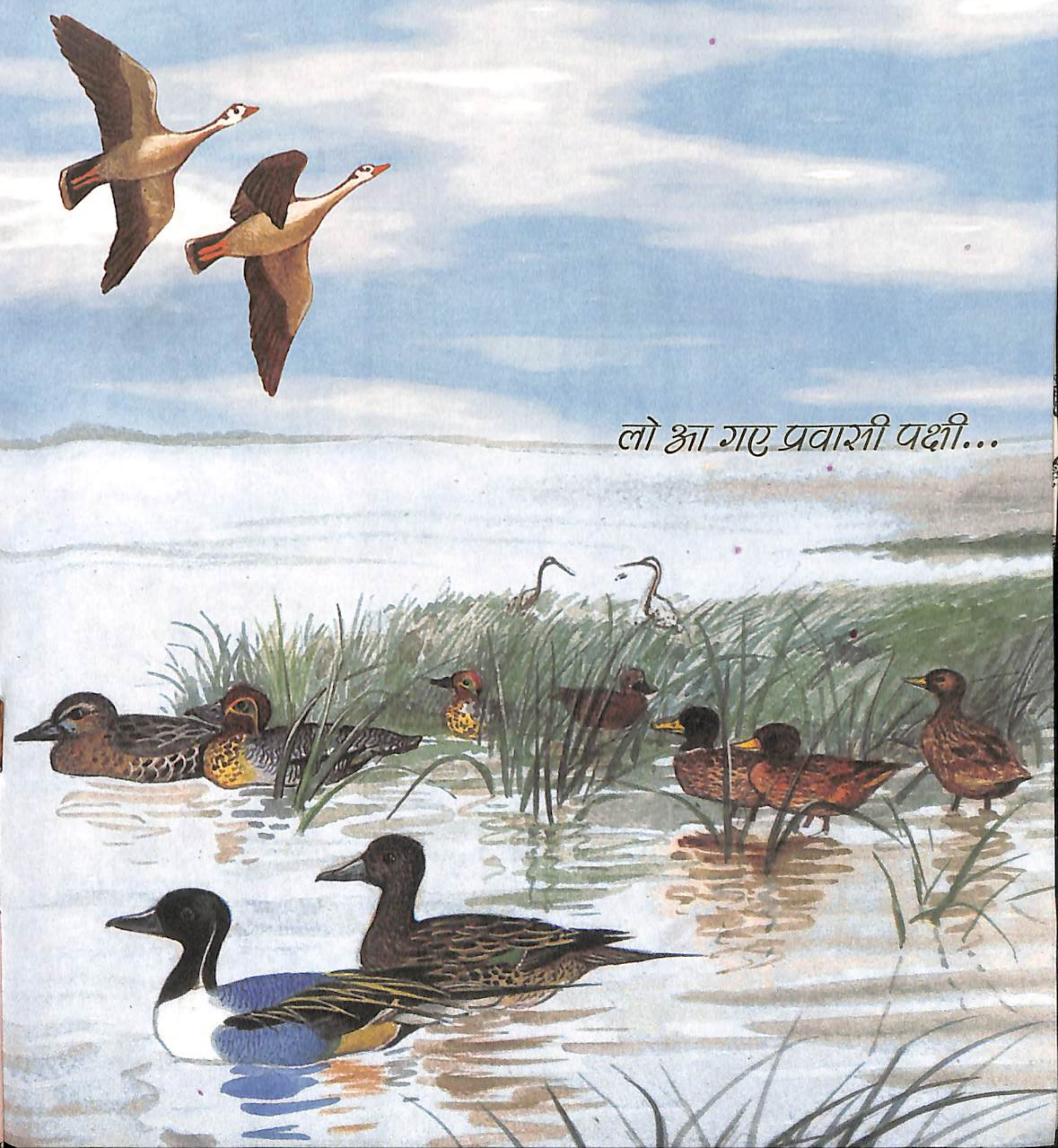

सिद्धार्थ गौतम, पांचवीं, देवास, म.प्र.

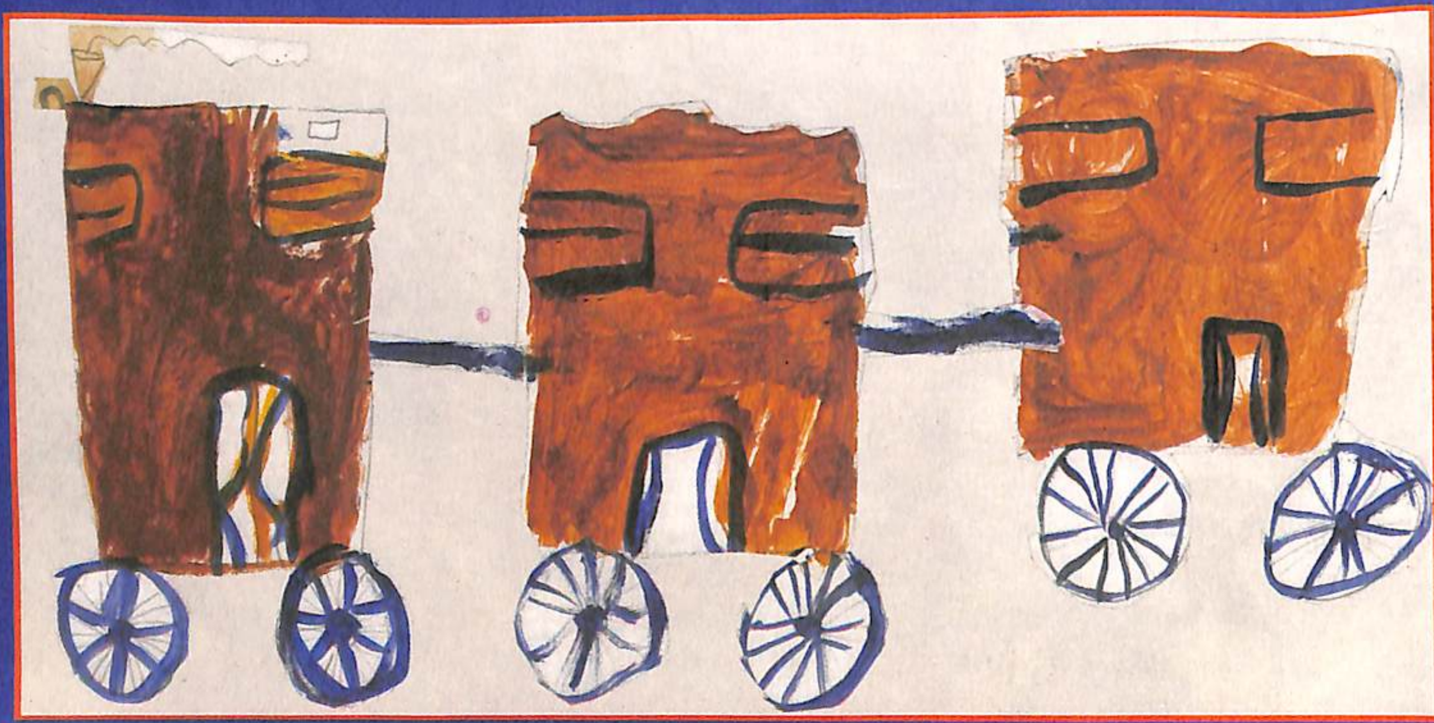

पलाश शंकर,   वर्ष, चन्द्रपुर, महाराष्ट्र

एकलव्य का प्रकाशन

चकमक

बाल विज्ञान पत्रिका

वर्ष-19 अंक-7 जनवरी 2004

क्या - क्या है इस अंक में

कहानी

नन्हा राजहंस 16

घोड़े का अण्डा 36

कविताएँ

शीत लहर 6

गधे का सूट 23

बैठे वे दम साध 40

चकमक चर्चा

टी वी के बारे में... 18

खेल व प्रयोग

लालटेन 25

विशेष लेख

प्रवासी पक्षी 3

टी वी का दिमाग पर असर 21

पुराने दिनों की बात है 26

चूहे 34

हर बार की तरह

इस बार की बात 2

मेरा पन्ना 8

चित्र पहेली 14

पुस्तक चर्चा 24

चकमक समाचार 29

माथापच्ची 32

एकलव्य एक स्वैच्छिक संस्था है जो शिक्षा, जनविज्ञान एवं अन्य क्षेत्रों में कार्यरत है। चकमक, एकलव्य द्वारा प्रकाशित अव्यावसायिक पत्रिका है। चकमक का उद्देश्य बच्चों की स्वाभाविक अभिव्यक्ति, कल्पनाशीलता, कौशल और सोच को स्थानीय परिवेश में विकसित करना है।

इस बार की बात . . .

पिछले कुछ महीनों में मध्यप्रदेश और छत्तीसगढ़ की दो शालाओं में शिक्षकों ने बच्चों को इतनी बेरहमी से पीटा कि उनका देहान्त ही हो गया। एक और घटना तो अभी हाल ही की है। छत्तीसगढ़ के एक गाँव में कुछ बच्चे स्कूल से भाग गए थे। शिक्षक ने उनमें से दो बच्चों को पकड़ लिया। उन्होंने दोनों के सिर आपस में इतने ज़ोर से मारे कि बेचारे वहीं जान गँवा बैठे। दोनों प्राथमिक शाला के बच्चे थे। वे शिक्षक की मार के डर के मारे ही स्कूल से भागे थे।

इस दर्दनाक घटना से मन में कई सवाल उठते हैं। क्यों पिटते हैं बच्चे? वे शिक्षकों द्वारा, माता-पिता द्वारा, लगभग हर बड़े से पिटते हैं। क्या सचमुच बच्चों की गलती होती है या बड़े अपनी हताशा या गुस्सा निकाल रहे होते हैं। और अगर गलती हो, तो क्या बच्चों की गलती सुधारने, उन्हें समझाने का कोई और तरीका नहीं है?

क्या हर देश में बच्चे इतने ही पिटते हैं जितने अपने देश में? इतना तो हमें पता है कि कनाडा, ऑस्ट्रेलिया तथा कुछ और देशों में बच्चों को पीटना एक कानूनी अपराध है। वहाँ पीटने वाले को जेल की सज़ा तक हो सकती है। कानून के मुताबिक शिक्षक तो क्या, माँ-बाप भी अपने बच्चों को पीट नहीं सकते हैं। लेकिन हमारे माँ-बाप और शिक्षक तो यह कहते हैं कि पिटाई न करो तो बच्चे बिगड़ जाते हैं।

पर ऐसे भी शिक्षक हैं जो बच्चों को कभी नहीं मारते हैं। यहाँ तक कि बच्चे अपने घर में मारपीट की शिकायत लेकर उनके पास आते हैं। और फिर यह तो कोई भी नहीं कहता कि अनुशासन के नाम पर बच्चों को इतना मारो कि वे मर ही जाएँ।

तुम्हें क्या लगता है? बच्चों को बड़े पीटें, यह सही है? क्या उन्हें बच्चों को पीटने की अनुमति होनी चाहिए? क्या तुम्हें लगता है कि किन्हीं कारणों से बच्चों को पीटना ज़रूरी है? अगर ऐसा लगता है तो क्यों? कौन-से कारण हैं वे?

इस सब के बारे में हमें अपने विचार ज़रूर लिखना!

● चकमक

चकमक

मासिक बाल विज्ञान पत्रिका

वर्ष-19 अंक-7 जनवरी 2004

सम्पादन	वितरण
विनोद रायना	कमल सिंह
अंजलि नरोना	मनोज निगम
टुलटुल विश्वास	**सहयोग**
सुशील शुक्ल	कविता सुरेश
विज्ञान परामर्श	राकेश खत्री
सुशील जोशी	शिवनारायण गौर

पत्र/चंदा/रचना भेजने का पता

एकलव्य

ई-7/ एच आई जी – 453
अरेरा कॉलोनी,
भोपाल - 462 016 (म.प्र.)
फोन : 2463380
eklavyamp@mantrafreenet.com

कवर का कागज़ : यूनीसेफ के सौजन्य से

चंदे की दरें

एक प्रति :	10.00 रुपए
छमाही :	50.00 रुपए
वार्षिक :	100.00 रुपए
दो साल :	180.00 रुपए
तीन साल :	250.00 रुपए
आजीवन :	1000.00 रुपए

सभी में डाक खर्च हम देंगे।

चंदा, मनीऑर्डर/ड्राफ्ट/चेक से एकलव्य के नाम पर भेजें। भोपाल से बाहर के चेक में बैंक चार्ज 30.00 रुपए अतिरिक्त जोड़ें।

लो फिर से आए

प्रवासी पक्षी

हम अपने आसपास कई तरह के पक्षी देखते हैं। इनमें से कुछ चिड़ियाँ ठण्ड के मौसम में ही दिखती हैं। गर्मी शुरू होते ही कहीं चली जाती हैं या यूँ कहें कि हमें दिखाई नहीं देतीं। वैसे ये पक्षी ठण्डे इलाकों में रहते हैं लेकिन बर्फ पड़ने पर उन इलाकों में जीवित नहीं रह पाते। इसलिए जब उत्तर और मध्य भारत में अच्छी ठण्ड पड़ती है (बर्फ तो यहाँ गिरती नहीं) तब वे उड़कर यहाँ आ जाते हैं। गर्मियाँ शुरू होते ही ये वापस चले जाते हैं। जो पक्षी इस तरह सर्दी और गर्मी के मौसम में दूर-दूर तक की यात्राएँ करते हैं उन्हें प्रवासी पक्षी कहा जाता है।

है न मज़ेदार बात! गर्मी का मौसम ठण्डी जगहों पर बिताओ, फिर ठण्ड का मौसम गर्म प्रदेशों में। लेकिन पक्षी इसके लिए खूब लम्बी यात्राएँ करते हैं, तब जाकर मन चाही जगह पहुँचते हैं।

कई तरह के पक्षी यहाँ मध्यप्रदेश में भी आते हैं - ग्वालियर, गुना, इन्दौर, जबलपुर और भोपाल में भी। नर्मदा नदी और भोपाल की बड़ी झील के किनारों के कई इलाकों में इनका डेरा लगता है। इनमें हंस और बत्तखों की कई प्रजातियाँ होती हैं।

हमारे देश के पूरे उत्तर भारत में कड़ाके की ठण्ड पड़ रही है। सभी ठण्डे इलाकों में तरह-तरह के पक्षी दिखाई देने लगे हैं। भोपाल में बड़ी झील के आसपास जो प्रवासी पक्षी आते हैं, हमने इनके चित्र जुगाड़कर इनके बारे में कुछ जानकारी ढूँढकर निकाली है। देखो तुम्हारे आसपास भी इस तरह के पक्षी आए हों शायद। अगर कुछ नोट कर सको तो हमें भी बताना।

काज़, बिरवा

इसका सिर और गर्दन का रंग सफेद होता है। इसके सिर पर काले रंग की पतली पट्टियाँ होती हैं। बस यही इसकी आसान पहचान भी है। और इसकी यही पहचान इसका अंग्रेज़ी नाम बन गया - बारहेडेड गूज़। इसे कई जगहों पर राजहंस भी कहते हैं। पंख सिलेटी रंग के, भूरे तथा सफेद होते हैं। ये सर्दियों में उत्तरी भारत और आसाम तक आते हैं। इनके झुण्ड अक्टूबर से आना शुरू होते हैं और मार्च तक ये लद्दाख या तिब्बत की तरफ वापस चल देते हैं। जब ये झुण्ड में उड़ते हैं तो लगता हैं कोई वी (V) आकार की चीज़ उड़ रही हो।

तिदारि या पुनन (शोवलर)

यह एक बत्तख है। नर के सिर और गर्दन चमकदार गहरे हरे रंग के होते हैं। मादा चितकबरी भूरी-सी होती है। नर और मादा दोनों में बेलचे जैसी चोंच होती है। ये झीलों तथा जलाशयों के पास टोलियों में रहती हैं। ये अप्रैल में वापस जाती हैं। और वापस जाने के बाद यूरोप के उत्तरी हिस्सों में अपने अण्डे देती हैं।

ज़्यादातर बत्तखें अक्टूबर-नवम्बर में हमारे यहाँ आती हैं और मार्च शुरू होने तक रहती हैं।

बदलते मौसम के हिसाब से पक्षी भी अपनी जगह बदलते हैं। कई तो हमारे देश में ही एक जगह से दूसरी जगह यात्रा करते हैं।

बत्तख और हंस जाति के पक्षी आमतौर पर शाकाहारी होते हैं। वैसे कुछ बत्तखें माँसाहारी भी होती हैं जो मछली और कीड़े खाती हैं।

बत्तखों की कुछ किस्में प्रवासी नहीं होतीं। वे गर्मियों में भी यहीं रहती हैं। इनमें हैं - गुगरल, चकवा-चकवी या सुर्खाब, गुड़गुड़ा आदि।

बत्तखों को मनुष्यों से नुकसान पहुँचने का खतरा होता है। इसलिए कुछ प्रजाति की बत्तखें मनुष्यों से दूर रहना पसंद करती हैं।

सींखपर या पिनटेल

इसकी लम्बी, नुकीली दुम होती है। सिर चॉकलेटी रंग का होता है। गर्दन और छाती सफेद होती है। जब सींखपर उड़ते हैं तो पंखों की सरसराहट साफ सुनी जा सकती है। ये अधिकतर जोड़ों में रहते हैं। उत्तरी यूरोप और मध्य एशिया के रहने वाले इस पक्षी को सर्दियों में भारत में रहना पसंद है। ये झीलों के किनारे सरकण्डों से घिरी जगहों पर रहती हैं। इन्हें शाकाहारी भोजन ही पसंद है।

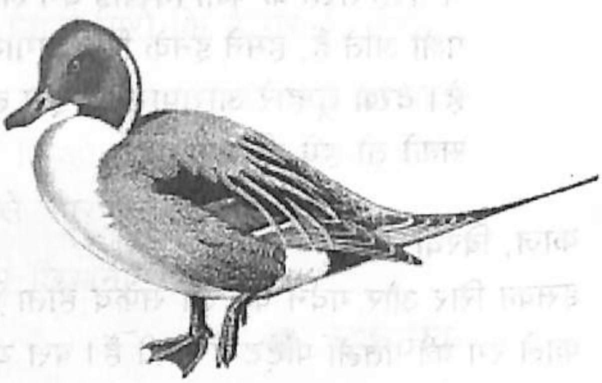

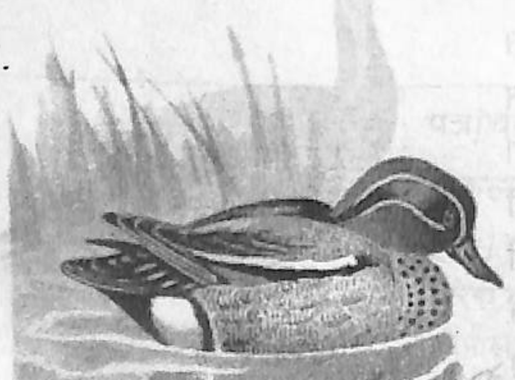

छोटी मुर्गाबी या कॉमन टील

यह तीन रंगों के पंखों वाली चिड़िया है। इसका सिर लाल-हरे रंग का होता है। यह झुण्ड में रहने वाली एक सामान्य प्रवासी बत्तख है। यह जाड़ों में उत्तर भारत के कई इलाकों में आती है। अप्रैल से जून तक ये उत्तरी यूरोप और पूर्वी साइबेरिया में अपने घरौंदे बनाते हैं।

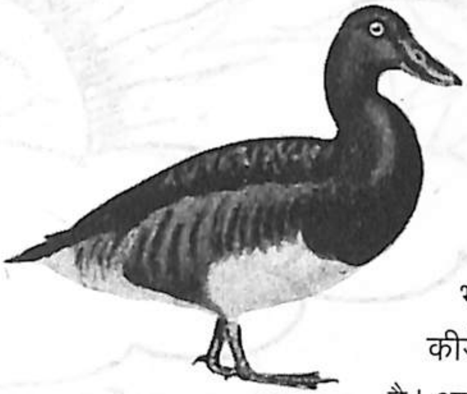

कुर्चिया या मजीठा

अंग्रेज़ी में इसे व्हाइट आइड पोचार्ड कहते हैं। जवान नर पक्षी की पुतली सफेद होती है। जबकि मादा व बच्चों की पुतली भूरी-सी होती है। इनका रंग गहरा बादामी और भूरा होता है। उड़ते समय इनका पेट सफेद दिखाई पड़ता है। सर्दियों में ये हमारे देश के सभी समुद्री भागों और झीलों में दिख जाते हैं। भोजन में पत्तियों-पौधों के अलावा कीड़े और घोंघे तो चलते ही हैं, कोई मछली भी मिल जाए तो क्या बात है। अण्डे देने के लिए पसंदीदा जगह है कश्मीर और समय है मई-जून।

गुलाबसिर बत्तख या पिंक हेडेड डक

यह खूबसूरत पक्षी 1935 में आखिरी बार बिहार के दरभंगा ज़िले में देखा गया था। इस पक्षी को बचाने के लिए 1956 में कानून बना लेकिन शायद तब तक बहुत देर हो चुकी थी। बहुत ज़्यादा शिकार करने की वजह से ये पक्षी लुप्त हो गया है। इसका सिर चमकीले गुलाबी रंग का और पंखों का रंग गहरा भूरा-सा कत्थई होता था। जाड़ों में यह हिमालय की तराई से चलकर देश के अन्य ठण्डे इलाकों में आती थी।

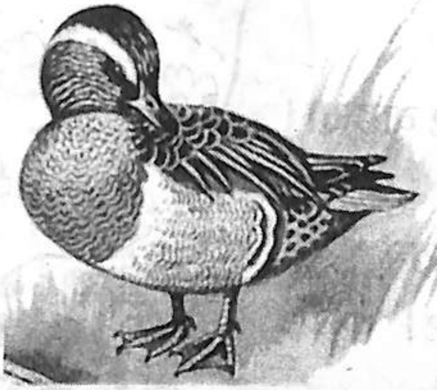

नीलपक्ष या चेतवा

इसका सिर सफेद चित्तियों वाला और गला एकदम सफेद होता है। पंखों और कंधों पर नीला धूसर रंग होता है। उत्तरी यूरोप से पूर्वी साइबेरिया के इलाके में रहने वाले ये पक्षी सर्दियाँ शुरू होने से पहले ही, अगस्त में पूरे भारत में आने लगते हैं।

नीलसिर या मेलार्ड

चोंच पीली, सिर गहरा हरा, और टाँगें नारंगी होती हैं। इसके शरीर पर काली लहरदार चित्रकारी होती है। इसके पंखों और पेट के बीच एक बैंगनी रंग का छापा होता है जो इसकी पहचान है। यह छापा दो सफेद व काली रेखाओं से घिरा होता है। ये पक्षी सर्दियों में पाकिस्तान और उत्तर-पश्चिम भारत में सामान्य और पूर्वी भारत में कम मात्रा में आते हैं। ये उत्तरी यूरोप में प्रजनन करते हैं।

प्रस्तुति : कविता सुरेश एवं सुशील शुक्ल, सहयोग : राहुल नरोना

शीत लहर

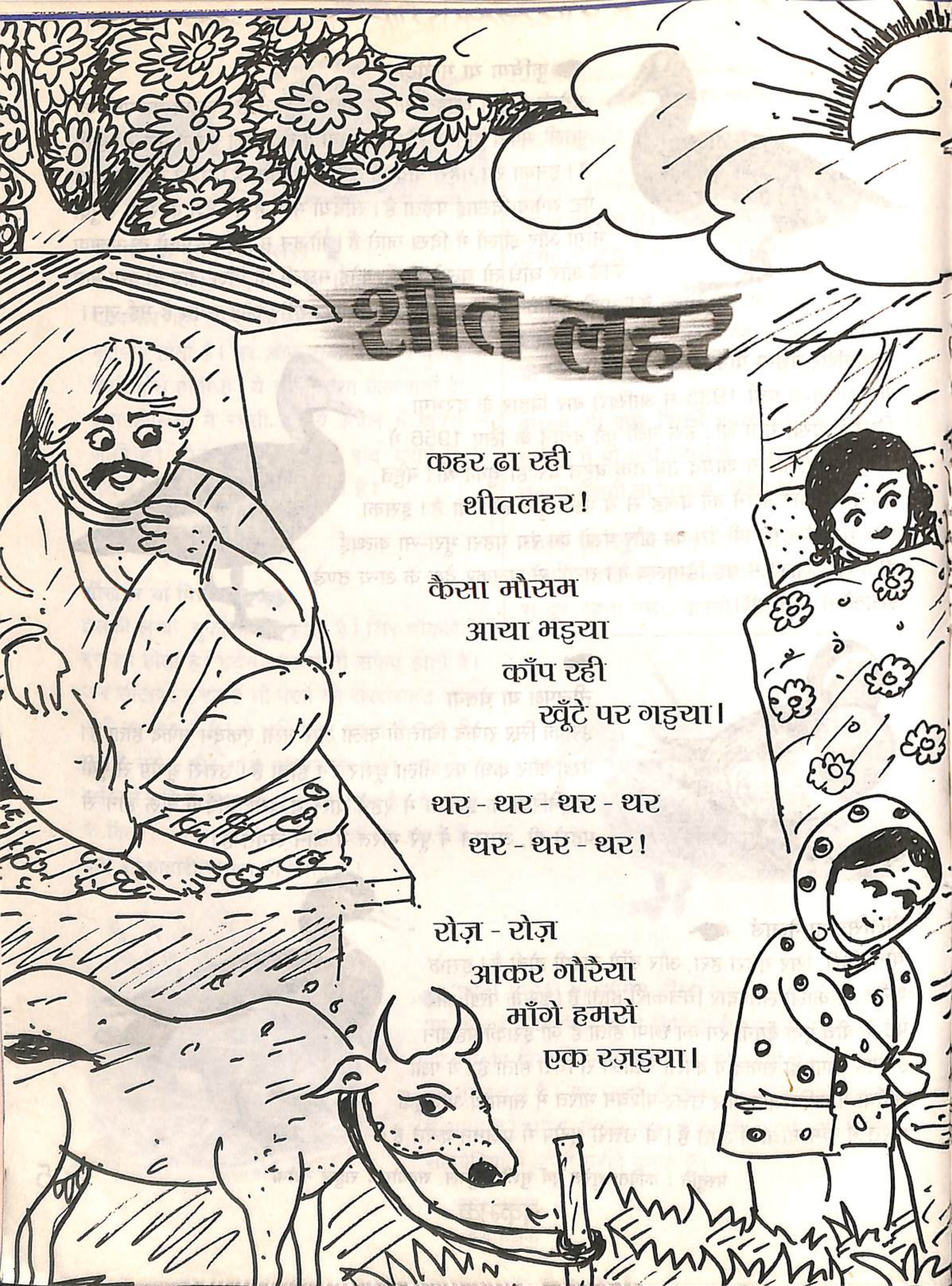

कहर ढा रही
शीतलहर!

कैसा मौसम
आया भइया
काँप रही
खूँटे पर गइया।

थर - थर - थर - थर
थर - थर - थर!

रोज़ - रोज़
आकर गौरैया
माँगे हमसे
एक रज़इया।

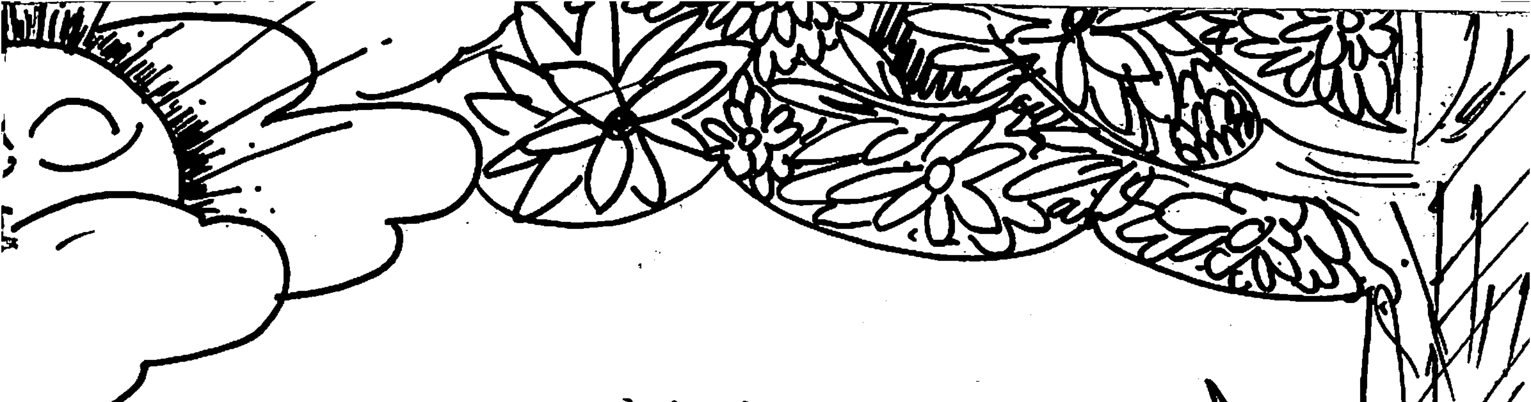

कहे ठंड से
खुले न पर!

बर्फ सरीखा
ठंडा पानी
नहीं नहाई
कब से नानी!

सूरज पर है
लगी नज़र!

ओस-कुहासा
पाला-कुहरा
घर-आँगन में
आकर ठहरा!

तन सबका है
रहा सिहर

● राजनारायण चौधरी
● चित्र- आशा रोमन

मेरा पन्ना

गौरैया

घर आँगन में फुदक रही,
चीं-चीं कर गौरैया।
बिजली सी अंग-अंग में भर
अम्बर में उड़ जाती।
हीरे जैसी चम-चम करती
नीलम जैसी नीली आँखें।
बादल से जो बूँदें गिरतीं,
तुझमें समा जातीं।
सोने से तेरे पंख,
उड़ जाएँ तुझे लेके संग।
फूलों की तू एक क्यारी,
फूलों से है तेरी यारी।
घर आँगन में फुदक रही,
चीं-चीं कर गौरैया।

● रीता सिंह, सातवीं, देवास, म. प्र.

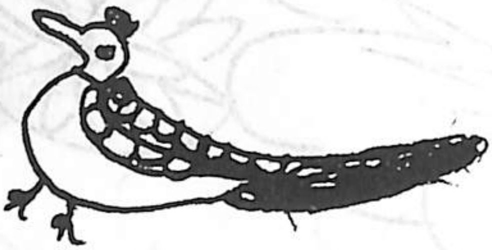

● राकेश, हरणगाँव, म. प्र.

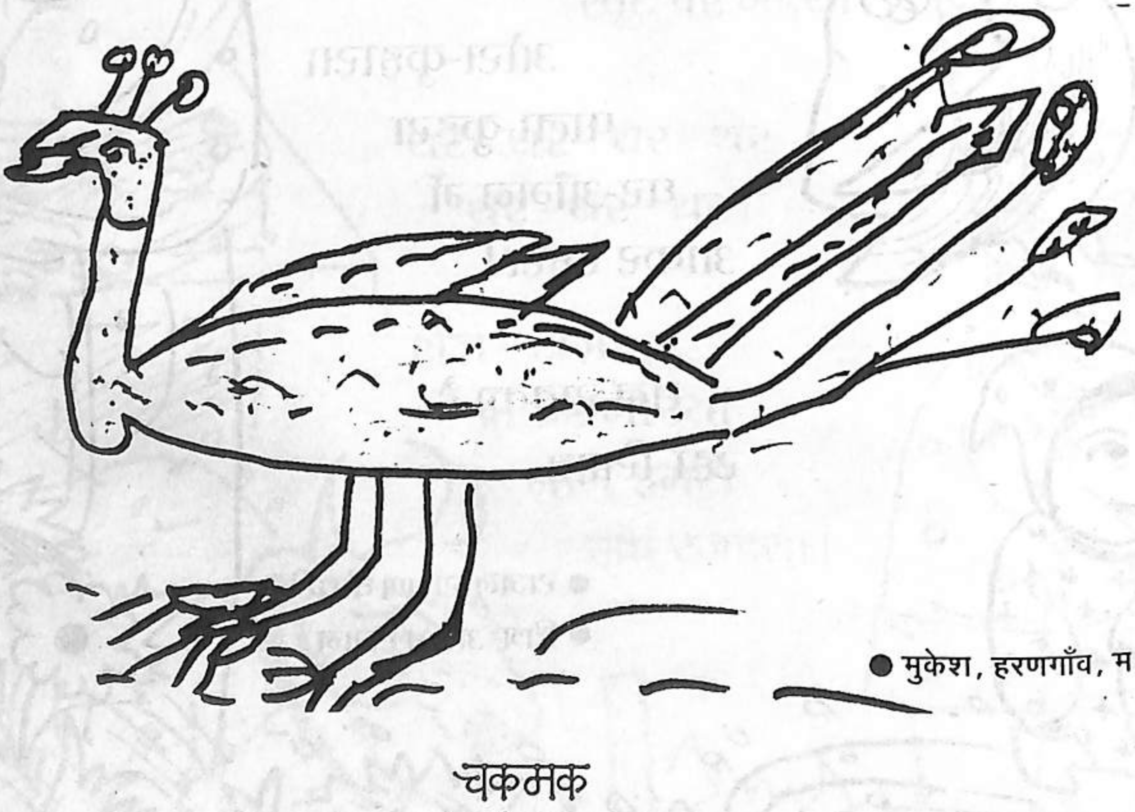

● मुकेश, हरणगाँव, म. प्र.

पढ़ाई

स्कूल खुले
शुरू पढ़ाई।

उठाओ बस्ता
पकड़ो रास्ता।

बीते महीने
आई परीक्षा।

सुनो डाँट मम्मी पापा की
करो तैयारी परीक्षा की।

पहली, दूसरी और तीसरी
लग गई फिर से छुट्टी।

कर लो आराम और कसरतें
क्योंकि उठाने हैं फिर से बस्ते।

● अंकिता पंड्या, पादरा, बड़ौदा, गुजरात

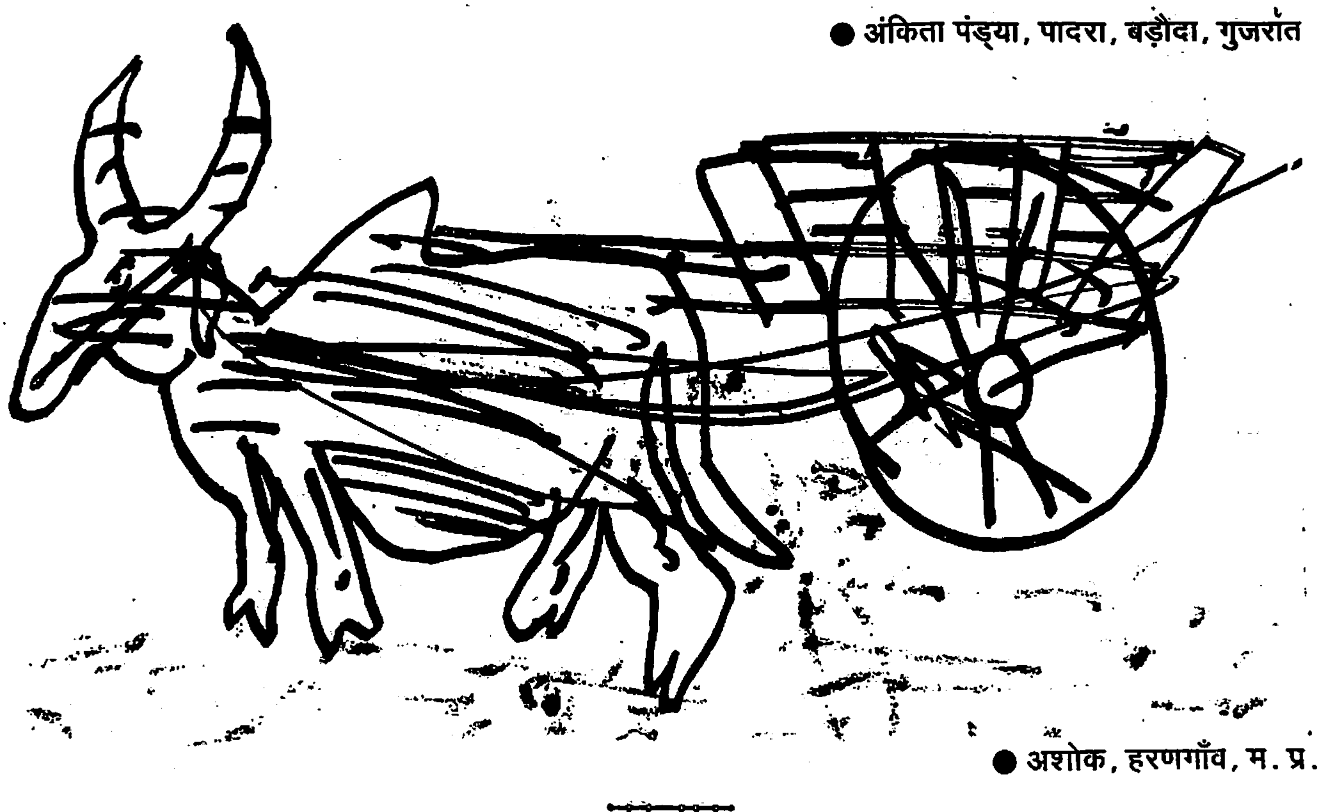

● अशोक, हरणगाँव, म.प्र.

पैसा

पैसा, पैसा, पैसा
जाने कैसा है पैसा।
कोई कहे ऐसा
कोई कहे वैसा।

यह सबको बनाता धनवान
लोग समझते इसे भगवान।
सब भागे हैं इसके पीछे
लेकिन ये है मेहनत के नीचे।

कोई नहीं मेहनत के जैसा
कर लो मेहनत पा लो पैसा
मेहनत ही है असली पैसा
पैसा, पैसा, पैसा।

● अनीता चौधरी, छठवीं, देवास, म. प्र.

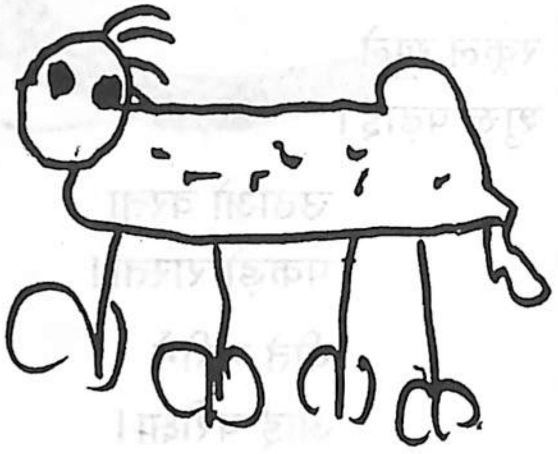

● अभिषेक,
हरणगाँव, म. प्र.

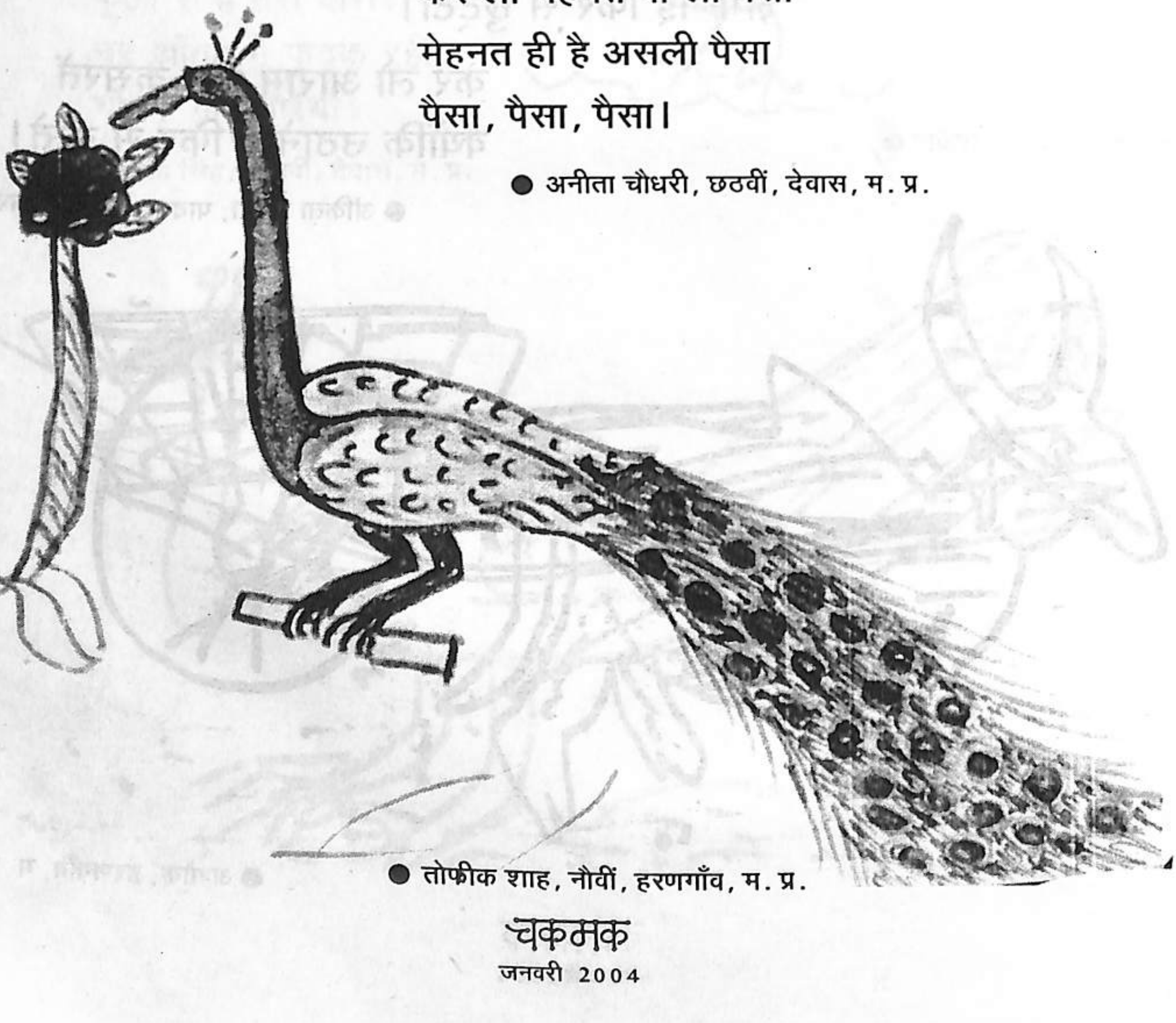

● तोफीक शाह, नौवीं, हरणगाँव, म. प्र.

बोबो और उसका गुब्बारा

एक दिन बोबो नाम का एक लड़का अपने पिताजी के साथ बाज़ार गया। तभी उसने वहाँ एक गुब्बारे बेचने वाले को देखा। उसने अपने पिताजी से कहा पिताजी मुझे एक गुब्बारा खरीदकर दीजिए न।

उसके पिताजी ने गुब्बारे वाले से पूछा, भाई साहब इसका मूल्य क्या है? गुब्बारे वाले ने कहा, दो रुपए।

जैसे ही बोबो को उसके पिताजी ने वह गुब्बारा दिया बोबो उड़ने लगा क्योंकि उसका गुब्बारा गैस से भरा हुआ था। उसके माता-पिता बहुत ही चिंतित होकर उसे नीचे उतारने की कोशिश कर रहे थे। लेकिन वह बहुत ही ऊपर चला गया था।

लेकिन जब उसके गुब्बारे की हवा छूटने लगी तो वह खुद-ब-खुद नीचे आने लगा। जैसे ही उसने अपने पिताजी को देखा तो वह खुशी से उनके पास चला गया।

● स्नेहा, भोपाल, म. प्र.

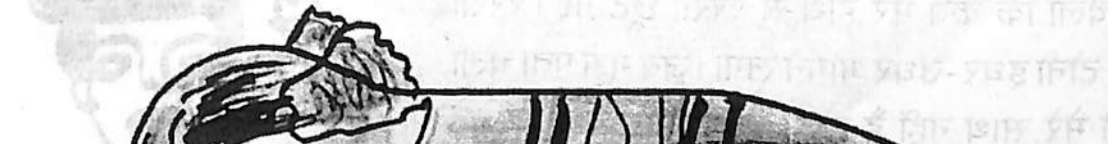

● रामनिवास कालेश्वर, (पता नहीं लिखा)

● सुषमा गुर्जर, पाँचवीं, हरणगाँव, म. प्र.

टोनी

हमारे घर एक कुत्ता था। उसका नाम टोनी था। वह सुंदर, बहादुर और प्यारा था। मैं स्कूल से आकर घंटों तक उसके संग खेला करती थी। वह हमेशा खुश रहता। मैं रोज़ उसको अपने साथ बाग में घुमाने ले जाती थी।

एक दिन मैं टोनी को लेकर मेला देखने गई। मेले में मुझे मेरी सहेली मिली। मैं उससे बातें करने लगी। पता ही नहीं चला कि कब मेरे हाथ से रस्सी छूट गई। रस्सी छूटते ही टोनी इधर-उधर भागने लगा। जब मुझे पता चला कि टोनी मेरे साथ नहीं है तो मैं उसे ढूँढने लगी पर वह नहीं मिला। मैं निराश होकर घर आई। मम्मी ने पूछा, ''टोनी कहाँ है?'' तो मैंने मेले की घटना बताई। मम्मी ने गुस्से में आकर मुझे चाँटा मार दिया। मैं रोते-रोते सो गई। सुबह उठकर मैंने देखा कि टोनी तो मेरे सामने खेल रहा है। मेरी तो जान में जान आई।

एक दिन टोनी को पता नहीं क्या हो गया। वह अजीब-अजीब हरकतें करने लगा। पापा उसे लेकर डॉक्टर के पास गए। दिन बीतते गए टोनी अब पहले जैसा नहीं था। अब वह उदास बैठा रहता। कुछ दिन बाद टोनी ने प्राण त्याग दिए। तब से टोनी के बिना अच्छा नहीं लगता।

● (नाम नहीं लिखा) बड़ौदा, गुजरात

● आशीष, चौथी, हरणगाँव, म. प्र.

बालक-पालक मेला, हरणगाँव, देवास, म.प्र. में बच्चों द्वारा पत्तियों से बनाई गई कुछ आकृतियाँ

परमिल

मतीन खान

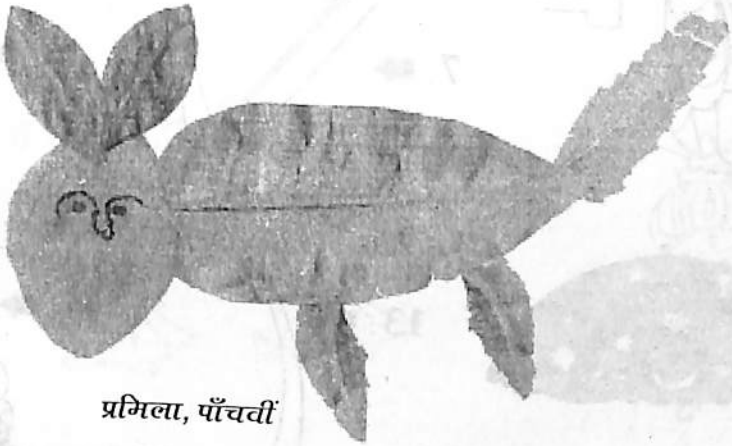

प्रमिला, पाँचवीं

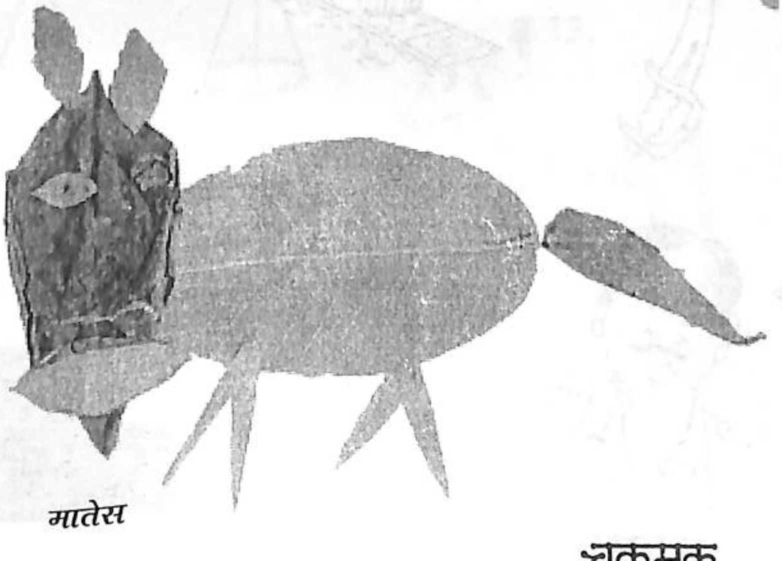

मातेस

कमल सिंह, सातवीं

चित्र-पहेली

1	■	2		3	■	4	5	■
6			■	7		■		■
	■		■		■	8		9
■	10	■	11		12	■	■	
13				■	14		15	
	■	■	16	17		■		■
18	19		■		■	20	■	21
■		■	22		■	23		
■	24		■	25			■	

संकेत

2. ➡

4. ➡
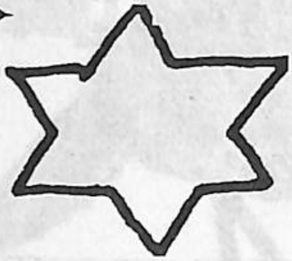

6. ➡

7. ➡
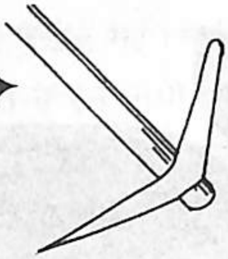

8. ➡
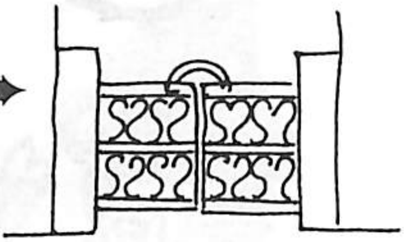

11. ➡

13. ➡

14. ➡
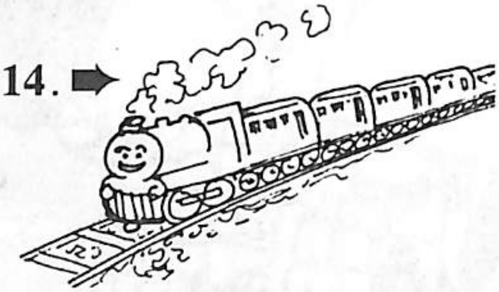

16. ➡
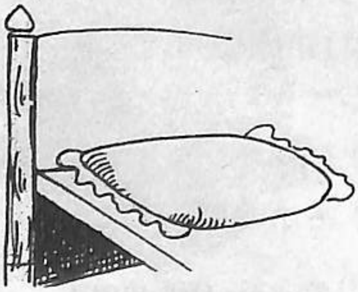

18. ➡

22. ➡
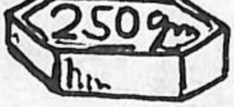

या

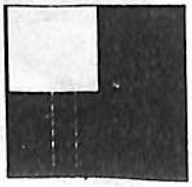

23.
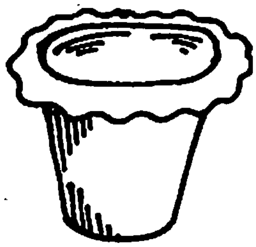

24.

25.
'खटना' में है शरीर का एक अंग

संकेत

1.
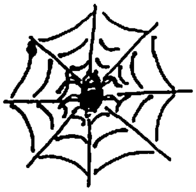

2.
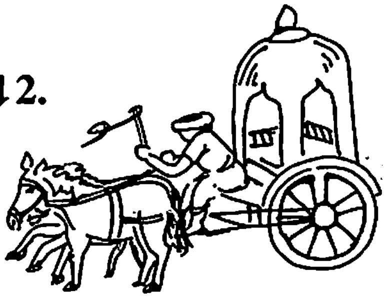

3.

भारतीय क्रिकेट टीम का एक ओपनर

5.
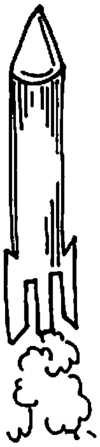

9.
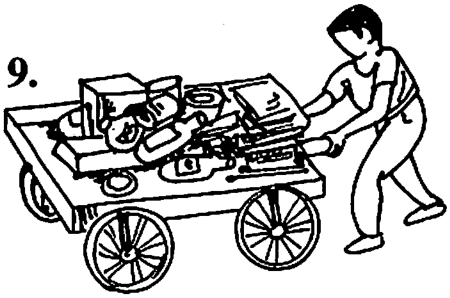

10.
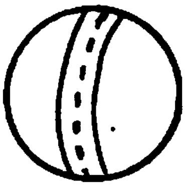

11.

12.

13.
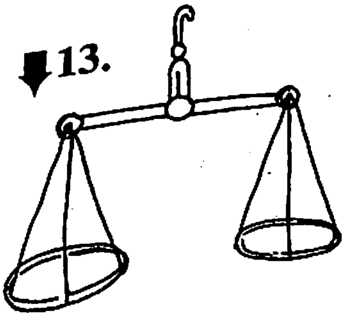

15.
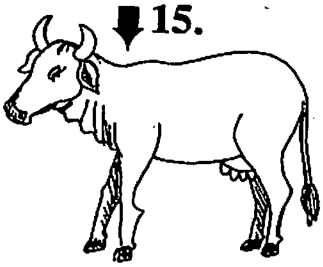

17.
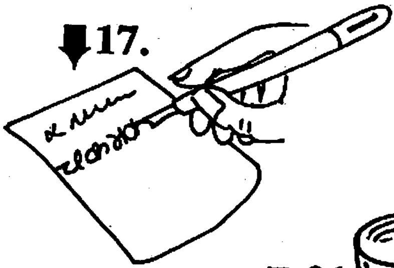

19.
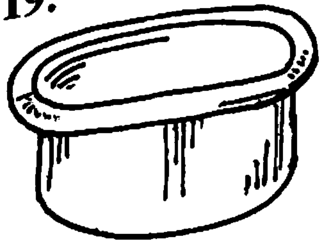

20.
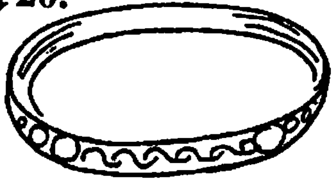

21.
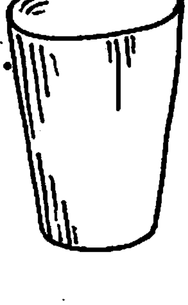

सभी चित्र : कैलाश दुबे

नन्हा राजहंस

कालू महाशय सैर को निकले। सुबह-सुबह की सैर! वो भी झील के किनारे-किनारे। बड़ा मज़ा आ रहा था। दो कदम टहलते, फिर खड़े होकर झील देख लेते। फिर दो कदम टहलते। बैठने का मन हुआ। एक पत्थर पर बैठ गए। उनकी नज़र एक हिलती-डुलती चीज़ पर पड़ी। देखने में रूई का गोला लगती थी। गोले में से एक पैनी-सी चीज़ उभरी। गुलाबी रंग की।

कालू महाशय से रहा नहीं गया। नज़दीक जा पहुँचे। एक राजहंस का बच्चा था। ज़्यादा दिन का नहीं होगा। उसका एक पैर छिल गया था। कालू सब कुछ समझ गया।

एक दिन पहले ही की तो बात है। जब उसने राजहंसों को विदा किया था। राजहंस का बच्चा भटक गया होगा। कालू सोचता रहा, 'क्या करूँ?'

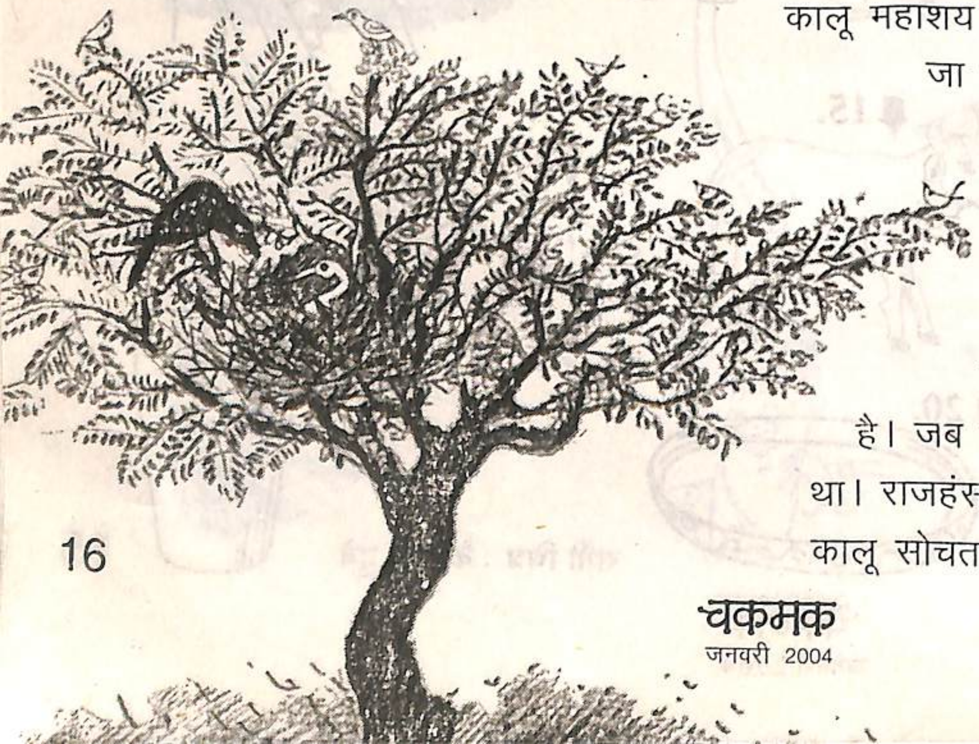

कालू ने राजहंस के बच्चे को अपने कंधे पर बिठाया। झील के पास ही उसका घर था। एक बहुत पुराने गुलमोहर के पेड़ की सबसे ऊँची शाख पर। कालू राजहंस को घर ले गया। मरहम पट्टी की। फिर कालू ने घर को देखा। घर काँटों और तिनकों से बना था। लेकिन राजहंस के बच्चे के लिए तो कुछ नरम घर चाहिए। उसने कुछ नरम चीज़ें जुटाईं। उन्हें करीने से बिछा दिया।

दिन बीतने लगे। कालू को पहली फेरी में अब जो भी मिलता उसे लेकर वह सीधे घर आता। नन्हे राजहंस को खिलाता। और फिर अपने खाने की तलाश में निकल जाता। धीरे-धीरे राजहंस की दोस्ती कई पंछियों से हो गई जो आसपास के पेड़ों पर ही रहते थे।

इस तरह एक साल गुज़र गया। दूर देश से राजहंसों के काफिले आने लगे थे। कालू रोज़ उन राजहंसों के पास जाता। पूछता कि क्या पिछले साल उनका कोई साथी छूट गया था। राजहंस न में सिर हिलाते। कालू खुश हो जाता।

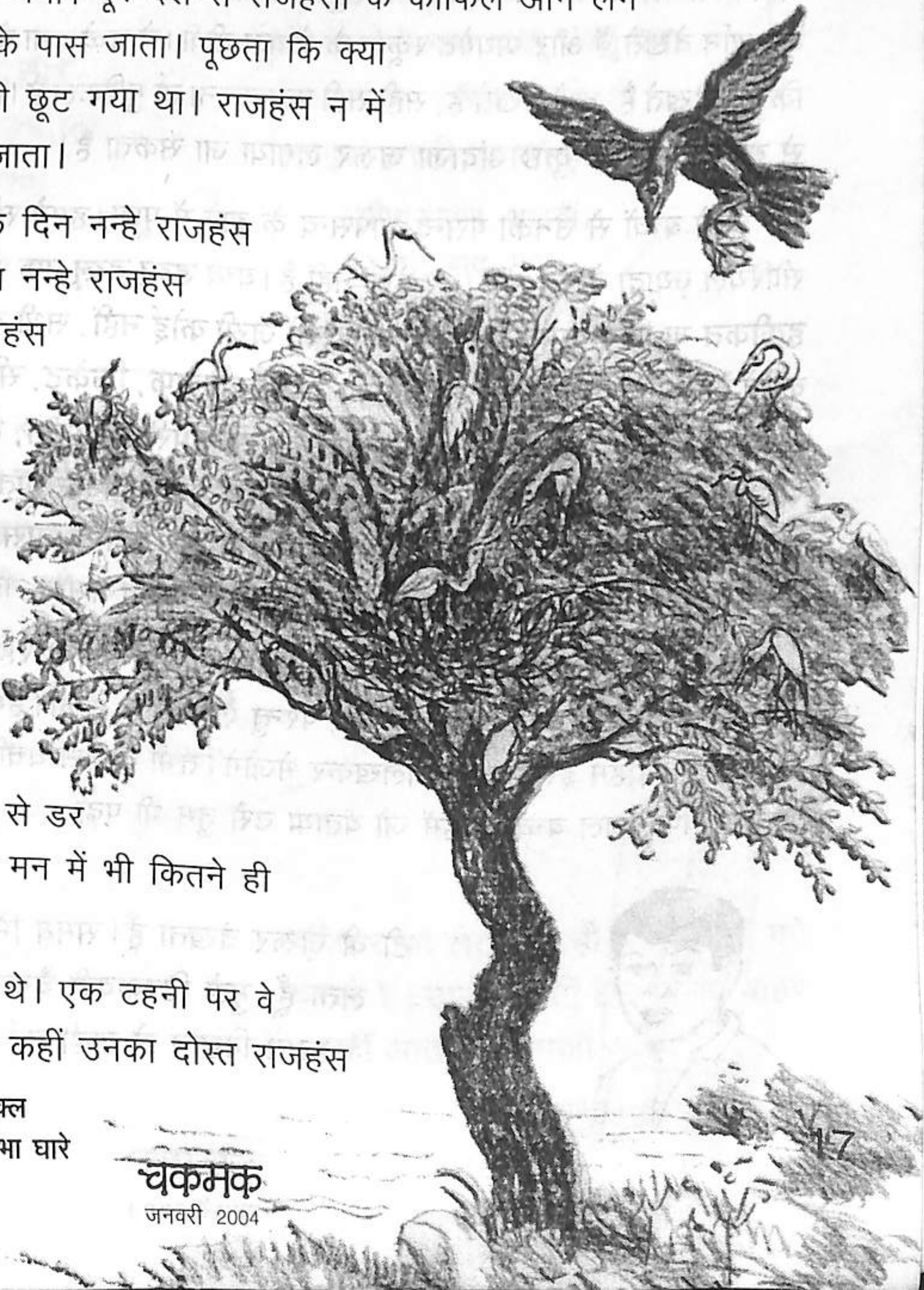

एक हफ्ता और बीता। एक दिन नन्हे राजहंस का परिवार मिल ही गया। इस नन्हे राजहंस की खैर-खबर जानने कई राजहंस कालू के घर आए। पूरा का पूरा गुलमोहर राजहंसों से लद गया। लगता था जैसे उस पर पत्तों की जगह राजहंस उगे हों। हर कोई उस राजहंस से कुछ न कुछ पूछ रहा था। कोई पूछता, 'यार, तुम एक साल यहाँ कैसे रहे?' कोई कहता, 'तुम्हें कालू से डर नहीं लगता?' नन्हे राजहंस के मन में भी कितने ही सवाल थे। वह बहुत खुश था।

उधर कालू महाशय उदास थे। एक टहनी पर वे अकेले बैठे थे। सोच रहे थे कि कहीं उनका दोस्त राजहंस चला गया तो.....।

● सुशील शुक्ल

● चित्र : शोभा घारे

बच्चों की राय टेलीविज़न के बारे में

भारत में करोड़ों बच्चे दूरदर्शन और केबल टेलीविज़न देखते हैं। हमने म.प्र. के होशंगाबाद और भोपाल में और बिहार के आरा ज़िले के कुछ बच्चों से इस बारे में बातचीत की। इनमें से कुछ बच्चे एक सरकारी स्कूल के तथा कुछ प्रायवेट स्कूल के हैं। एक जानकारी यह मिली कि सरकारी स्कूल में पढ़ने वाले ज़्यादातर बच्चे दूरदर्शन देखते हैं और प्रायवेट स्कूल के केबल टीवी। ये बच्चे क्या देखते हैं, कितना देखते हैं, क्यों देखते हैं, सही सही पता करना तो मुश्किल है। हाँ, बच्चों से बातचीत करके कुछ अंदाज़ा ज़रूर लगाया जा सकता है।

हमने बच्चों से उनकी पसन्द-नापसन्द के बारे में पूछा। हमने सोचा था कि बच्चे बच्चों के सीरियल ज़्यादा देखते होंगे। पर ऐसा नहीं है। बच्चे **डब्लू डब्लू एफ** से लेकर **क्या हादसा क्या हकीकत** या फिर **कुमकुम** से लेकर **जस्सी जैसी कोई नहीं**, सभी कुछ देखते हैं और पसन्द करते हैं। ऐसा लगता है कि लड़कों को **डब्लू डब्लू एफ**, **क्रिकेट**, **सी आई डी** और **हुकुम मेरे आका** जैसे सीरियल ज़्यादा पसन्द आते हैं। **सोन परी**, **कुमकुम**, **तुम बिन जाऊँ कहाँ** जैसे सीरियल लड़कियाँ ज़्यादा पसन्द करती हैं। पर एक मज़ेदार बात यह है कि लड़के हों या लड़कियाँ, दोनों को ही **डिस्कवरी चैनल** पसन्द है और **क्योंकि सास भी कभी बहू थी** नापसन्द। उनका कहना है कि उन्हें परिवार के ये झगड़े बिलकुल पसन्द नहीं।

इन कार्यक्रमों के बारे में बच्चों ने जो बताया वो हम यहाँ दे रहे हैं। वैसे हमारी इच्छा तो बहुत सारे बच्चों से बात करने की थी, परन्तु ऐसा हो न सका। हम तुमसे यह उम्मीद करते हैं कि तुम भी हमें इस पर कुछ लिखकर भेजोगे। तभी तो इस चर्चा को और आगे बढ़ाया जा सकेगा। फिलहाल बच्चों ने हमें जो बताया उसे तुम भी पढ़ो :

टी वी ज़रूर देखता हूँ। समय मिलने पर कोई भी सीरियल देख लेता हूँ। मुझे डिस्कवरी चैनल देखना सबसे ज़्यादा पसंद है। इसमें विज्ञान से जुड़ी नई-नई जानकारियाँ मिलती हैं.......

अमित कुमार, आठवीं, आरा, बिहार

मैं टी वी पर समाचार सुनती हूँ, आजतक देखती हूँ। डिस्कवरी किड्स में सांप के बारे में बताते हैं, तो ज़रूर देखती हूँ..... हर्षिता, छठी, आरा, बिहार

मुझे टी वी पर कार्टून नेटवर्क सबसे ज़्यादा पसंद है। गाना भी खूब सुनती हूँ। मुझे समाचार अच्छा नहीं लगता। उसमें मारपीट और बकबक दिखाते हैं . . . .

मोनिका कुमारी, छठी, आरा, बिहार

मुझे सबसे बुरा क्योंकि सास भी कभी बहू थी लगता है, क्यों उसमें स्टोरी को ज़्यादा खींच रहे हैं। मुझे सबसे अच्छा डब्लू डब्लू एफ लगता है, इनके मारने की स्टाइल अच्छी लगती है . . .

सुमित राठौर, आठवीं, होशंगाबाद, म.प्र.

डी डी-2 पर सर्कस, हैलो इंस्पेक्टर जैसे सीरियल बहुत अच्छे थे। अब वह समाचार चैनल बन गया है – क्या इनको डी डी-1 पर पूरा किया जाएगा . . .

अर्चना, आठवीं, भोपाल, म. प्र.

हमें सबसे गंदा नाटक सास भी कभी बहू थी, लगता है क्योंकि इस नाटक में कभी सास भड़कती है, तो कभी बहू को कोई भड़काता है। सास बहू के झगड़े से हमें बहुत बुरा लगता है ....

मनीषा चौरे, नौवीं, होशंगाबाद, म.प्र.

रविवार को लेटे-लेटे ही हम रंगोली को देखते हैं। ठण्ड लगती है इसलिए बाहर नहीं आते। खूब मज़ा आता है . . . .

रीता, आठवीं, भोपाल, म. प्र.

मुझे **शाका लागा बूम बूम** अच्छा लगता है क्योंकि इसमें बच्चों के बारे में बताते हैं। लेकिन इसमें मुझे उसकी भाभी अच्छी नहीं लगती। **कुमकुम, कभी सौतन कभी सहेली, संजीवनी, सारा आकाश, कहीं किसी रोज़**, सास बहू के नाटक मुझे अच्छे नहीं लगते क्योंकि इनसे प्रत्येक घर में दरार पैदा होती है। मुझे डिस्कवरी चैनल देखना भी अच्छा लगता है क्योंकि इसमें जानवरों के बारे में बहुत जानकारी दी जाती है . . . .

अमिता राजपूत, सातवीं, होशंगाबाद, म.प्र.

हम तो खूब टीवी देखते हैं। मम्मी मना करती हैं, फिर भी...

विकास, आठवीं, भोपाल, म.प्र.

टीवी पर विज्ञापन बहुत आते हैं। फिल्म के बीच बीच में। वह नहीं आना चाहिए . . . .

सुमन, आठवीं, भोपाल, म.प्र.

मैं टीवी रोज देखता हूँ। बिजली नहीं रहने से कभी-कभी नहीं देख पाता हूँ। **कुसुम, सीआईडी, क्या हादसा क्या हकीकत** सीरियल मैं देखता हूँ। **डिस्कवरी चैनल** मुझे सबसे अच्छा लगता है क्योंकि इसमें जंगल और जानवर के बारे में नई-नई जानकारी मिलती है ....

राहुल कुमार, चौथी, आरा, बिहार

'आपबीती' में सब जानकारी बाद में मिलती है, पहले कुछ पता नहीं रहता। इसलिए आखिरी तक देखते रहते हैं। . . .

प्रशांत, आठवीं, भोपाल, म.प्र.

चकमक

बाल विज्ञान पत्रिका

एकलव्य का प्रकाशन सम्पर्क : एकलव्य, ई-7/एच.आई.जी. 453, अरेरा कॉलोनी, भोपाल-462 016

फरवरी 2004

सोम	मंगल	बुध	गुरू	शुक्र	शनि	रवि
						1
2	3	4	5	6	7	8
9	10	11	12	13	14	15
16	17	18	19	20	21	22
23	24	25	26	27	28	29

चित्र : सुभाष व्याम

क्या असर पड़ता है टेलीविज़न का दिमाग पर?

● अंजली नरोना

क्या असर पड़ता है टेलीविज़न का दिमाग पर? भई टेलीविज़न सीरियल के पसन्द और नापसन्द की बात तो हमने की। पर क्या तुम्हें पता है कि टेलीविज़न देखने से दिमाग पर क्या-क्या असर पड़ते हैं?

ज़्यादा टेलीविज़न देखने वाले बच्चों को जल्दी चश्मा लग जाता है, यह तो तुमने सुना ही होगा! टेलीविज़न का दिमाग पर तरह-तरह से असर होता है। यह बात अब एक तरह से पक्की हो गई है कि लड़ाई और मारकाट के धारावाहिक अधिक देखने से बच्चे काफी लड़ाकू और गुस्सैल हो जाते हैं। इस बात की सम्भावना बढ़ जाती है कि जो बच्चे डब्लू डब्लू एफ जैसे धारावाहिक ज़्यादा देखते हैं वे बड़े होकर अधिक उग्र बनें। अगर तुम्हें ऐसे बच्चे मिलें जो मारधाड़ वाले धारावाहिक पसन्द करते हों, तो उन्हें इनसे दूर करने की कोशिश करना। नहीं तो हो सकता है तुम्हें बड़े होकर बहुत सारे गुस्सावाले लोगों का सामना करना पड़े। ऐसे ही अश्लील और भोंडे मज़ाक वाले धारावाहिक भी कहीं न कहीं मन पर असर डालते हैं।

यह अच्छी बात है कि जिन बच्चों से हमने बात की, वे ऐसे धारावाहिक नहीं देखते। पर हो सकता है तुम्हारे आसपास कई बच्चे ऐसे धारावाहिक देखते हों। वैसे तो माता-पिता को देखना चाहिए कि बच्चे क्या देख रहे हैं। पर एक दोस्त के नाते तुम भी उनकी मदद कर सकते हो। और इससे भी ज़्यादा, तुम अखबारों में और सूचना एवं प्रसारण विभाग को भी पत्र लिख सकते हो कि क्या प्रसारित होना चाहिए और क्या नहीं।

ये तो हुई विभिन्न धारावाहिक देखने के असर की बात! पर मात्र टेलीविज़न देखने से ही इससे भी गहरा असर पड़ता है। इस बारे में वैज्ञानिकों ने कई शोध किए हैं। उन्हें पता चला है कि

टेलीविज़न चलते समय उसमें से कुछ किरणें निकलती रहती हैं। ये किरणें दिमाग को आधा सुला-सा देती हैं। इसलिए टेलीविज़न की छवियों पर सवाल कर पाना, उनकी आलोचना कर पाना बहुत मुश्किल हो जाता है।

वैज्ञानिकों को एक और बात पता चली है। टेलीविज़न पर छवियाँ बहुत जल्दी-जल्दी बदलती हैं। 1–2 सेकेण्ड में ही एक नया दृश्य आ जाता है। अगर एक छवि ज़्यादा देर तक टिके, तो भी 10–15 सेकेण्ड में तो दृश्य बदल ही जाता है। इसके कारण बच्चों की ध्यान दे पाने की अवधि बहुत कम हो जाती है। इसका विपरीत असर पढ़ाई पर पड़ता है। यह तो कहते ही हैं न कि 'टेलीविज़न बहुत देखता है, पढ़ाई पर ध्यान ही नहीं देता'। भई क्या करें टेलीविज़न देखते-देखते पढ़ाई क्या, किसी भी चीज पर ज़्यादा देर तक ध्यान देने की आदत खत्म हो जाती है। पर तुम में से कई लोग कहोगे कि टेलीविज़न में अच्छी चीज़ें भी तो देखने को मिलती हैं...... कार्टून, डिस्कवरी, एनिमल प्लेनेट, नेशनल ज्योग्राफिक, मुल्ला नसरुद्दीन. . . . इनसे कितनी जानकारी मिलती है। नई-नई बातें पता चलती हैं। और फिर समाचार भी हैं....... ताज़ा खबरों के लिए।

बात एक तरह से सही भी है। पर इनमें से अधिकांश चीज़ें हमें किताबों व समाचार पत्रों से भी मिल सकती हैं। किताबें और समाचार पत्र पढ़ते हुए हमें छपी सामग्री पर सोच-विचार करने का समय भी मिलता है। कोई बात ठीक नहीं लगी हो या समझ में नहीं आई हो तो फिर से पलट सकते हैं। टेलीविज़न के कार्यक्रमों के साथ यह सोच विचार नहीं हो पाता है। यहाँ तो पल में छवि बदल जाती है, फिर वापस नहीं आती।

इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए कम ही टेलीविज़न देखो तो अच्छा। हफ्ते में दस घण्टे से ज़्यादा नहीं! बाकी समय में खेलो, कहानी पढ़ो, गप्प लड़ाओ, चित्र बनाओ, और बहुत सी चीज़ें होंगी तुम्हारे करने के लिए, .. वो करो! तुम अपने दोस्तों को भी मनाना कि वे भी कम टेलीविज़न देखें। उम्मीद है तुम उन्हें उनके मम्मी पापा से ज़्यादा अच्छे तरीके से समझा पाओगे!

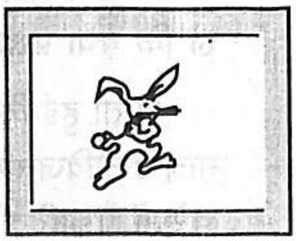

गधे का सूट

देख गधे को सूट-बूट में,
लोमड़ दौड़ा आया।

बोला उससे, गधेरामजी,
ये सूट कहाँ से लाया।

पास जाकर गधेराम जी,
बोले लोमड़ के कान में।

अभी महीने पहले इसे,
खरीदा था जापान में।

सिराज अहमद
चित्र : आकाश राजोरिया

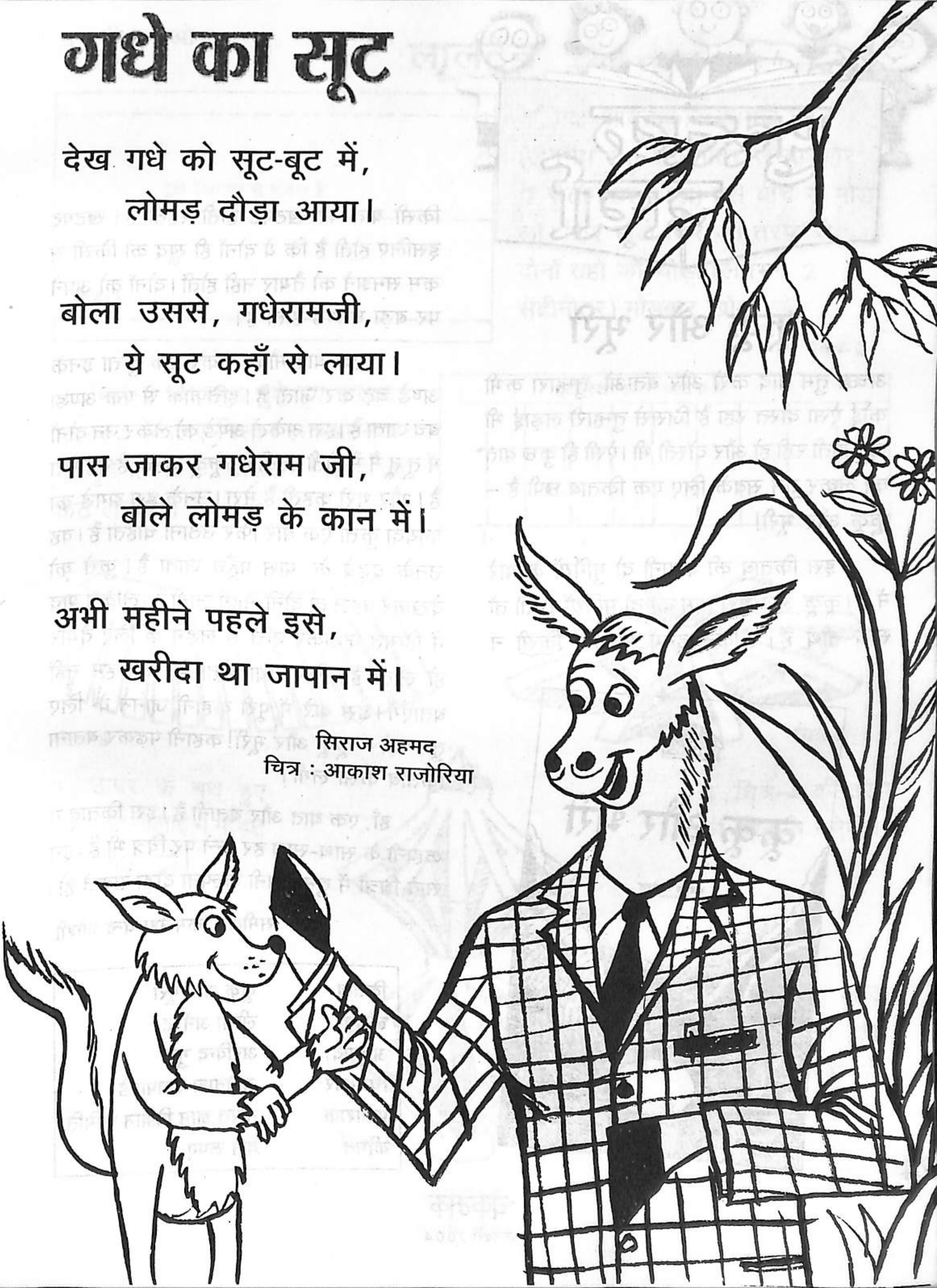

कूकू और भूरी

अच्छा तुम याद करो और बताओ, तुम्हारा कभी कोई ऐसा दोस्त रहा है जिससे तुम्हारी लड़ाई भी खूब होती रही हो और दोस्ती भी। ऐसी ही कुछ बात को लेकर तुम सबके लिए एक किताब छपी है – कूकू और भूरी!

इस किताब की कहानी दो मुर्गियों के बारे में है। कूकू और भूरी नाम की दो मुर्गियाँ रहती तो साथ-साथ हैं। लेकिन इनमें रोज़ाना किसी न किसी बात पर खटपट होती रहती है। खटपट इसलिए होती है कि ये दोनों ही खुद को किसी से कम समझने को तैयार नहीं होतीं। दोनों को अपने पर बड़ा घमण्ड होता है।

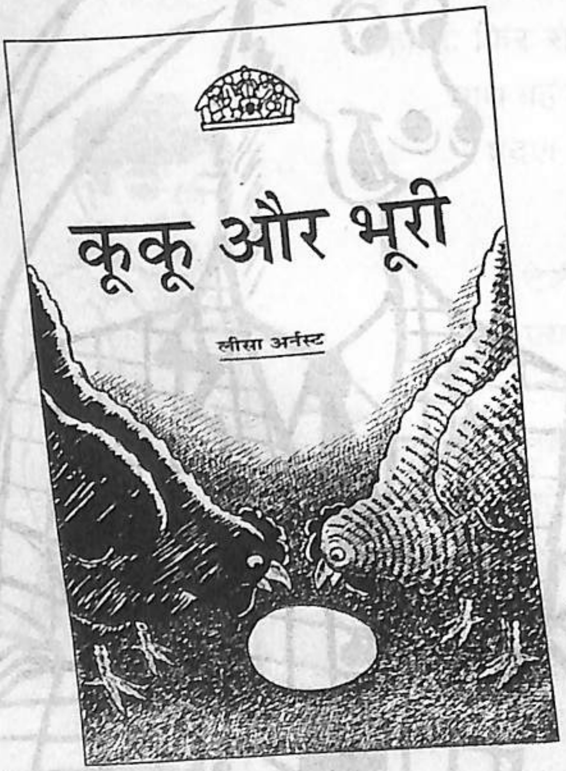

एक बार मौका पाकर एक कुत्ता इनके अण्डे चट कर जाता है। इत्तिफाक से एक अण्डा बच जाता है। इस अकेले अण्डे को लेकर उन दोनों में तू तू मैं मैं होती रहती है। कूकू कहती है यह मेरा है। और भूरी कहती है मेरा। उनके इस झगड़े का फायदा कुत्ता एक बार फिर उठाना चाहता है। वह उनके दड़बे के पास पहुँच जाता है। कुत्ते को देखकर पहले तो दोनों सहम जाती हैं। लेकिन बाद में हिम्मत जुटाकर कुत्ते से लड़ने के लिए तैयार हो जाती हैं। फिर क्या होता है? यह हम नहीं बताएँगे। इस बारे में पूरी कहानी जानने के लिए तुम पढ़ो – कूकू और भूरी! कहानी पढ़कर बताना किताब कैसी लगी।

हाँ, एक बात और बतानी है। इस किताब में कहानी के साथ-साथ हर पन्ने पर चित्र भी हैं। इन सादे चित्रों में तुम अपनी कल्पना दौड़ा सकते हो।

समीक्षा : कमलेश चन्द्र जोशी

किताब	कूकू और भूरी
लेखक	लीसा अर्नेस्ट
अनुवाद	अरविन्द गुप्ता
चित्रकार	अविनाश देशपाण्डे
प्रकाशक	भारत ज्ञान विज्ञान समिति
कीमत	दस रूपए

लालटेन

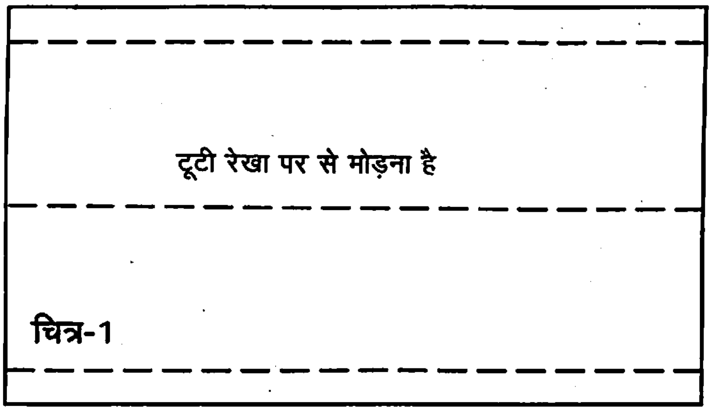

चित्र-1

1. एक आयताकार कागज़ लो। (लगभग 10 सेंटीमीटर लम्बा और 7 सेंटीमीटर चौड़ा) इसे बीच से मोड़ लो। फिर खुले सिरे की तरफ से दोनों तहों को थोड़ा (लगभग 2 सेंटीमीटर) मोड़कर खोल लो।

चित्र-2

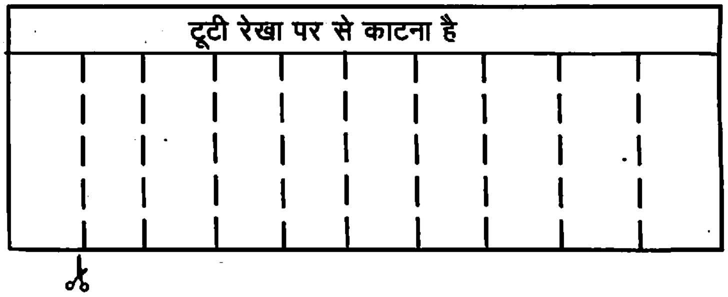

2. चित्र-2 की तरह मुड़े हुए कागज़ पर कट के लिए निशान लगाओ। ऊपर के मुड़े हिस्से को छोड़कर निशान पर कट लगाओ।

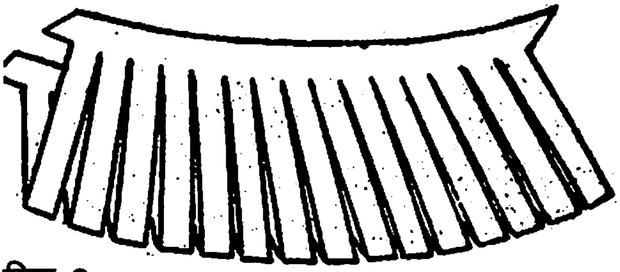

चित्र-3

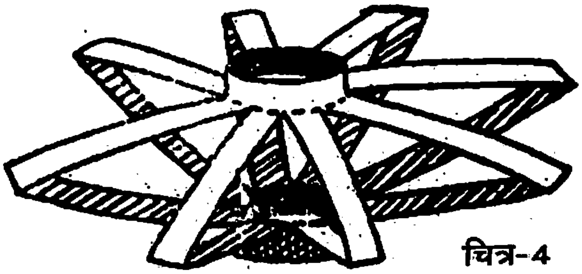

चित्र-4

3. ऊपर के बचे हुए हिस्से को गोलाई में मोड़ते हुए चिपका दो।

4. चित्र-4 की तरह की आकृति बनेगी।

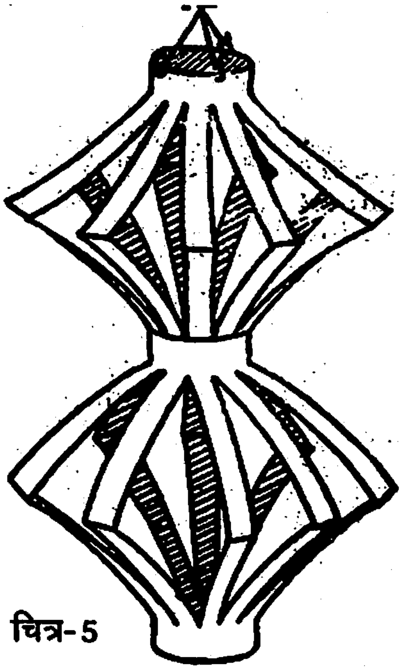

चित्र-5

5. इसी तरह की एक और आकृति बनाओ, दोनों का एक-एक सिरा आपस में चिपका दो। (चित्र-5) लालटेन तैयार है।

पुराने दिनों की बात है . . .

एक बात बताओ। क्या तुमने कभी सोचा है कि हम लोग अलग-अलग काम करने में कितने तरह-तरह के औज़ारों का उपयोग करते हैं। इनमें से बहुत से औज़ार तो बहुत सरल किस्म के होते हैं। जैसे कपड़ा फट जाए तो उसे सुई से सीते हैं, कुछ ठोकना-पीटना हो तो हथौड़ी से ठोकते हैं, काटने के लिए चाकू या दराती की मदद लेते हैं, मसाला पीसने के लिए सिल-बट्टे का इस्तेमाल करते हैं। देखने में ये सभी चीज़ें बहुत सरल-सी हैं, पर हमारा काम कितना आसान कर देती हैं, है न।

आज हम बात करेंगे हमारे उन पूर्वजों की और उनके बनाए पत्थर के औज़ारों की जो हमसे कई, कई, कई हज़ारों साल पहले दुनिया में बसते थे। तुमने शायद पढ़ा हो कि बहुत पहले लोग हमारी तरह गाँव-शहर बसाकर नहीं बल्कि जंगलों में रहते थे। वे खाने के लिए फल-फूल, जड़ी-बूटियाँ और शिकारी जानवरों की तलाश में लगातार जगह-जगह घूमते रहते थे। उस समय न तो बड़े-बड़े शहर थे, न बड़ी-बड़ी फैक्ट्रियाँ और न मशीनें। तब तो लोहा, ताँबा जैसी धातुओं के बारे में भी लोगों को मालूम नहीं था। फिर भी, उस समय के लोग अपने काम में कई तरह के औज़ारों की मदद लेते थे। ये औज़ार वे खुद बनाते थे। इन्हें बनाने के लिए आमतौर पर हड्डियों और पत्थरों का उपयोग किया जाता था। पत्थरों को आकार देने के लिए भी दूसरे पत्थरों का, या फिर जानवर की हड्डियों, सींग आदि का उपयोग किया जाता था। चलो, अब देर किस बात की। हम कुछ औज़ार देखते हैं और साथ ही साथ यह भी देखते चलते हैं कि ये हमारे पूर्वजों के किस काम आते थे।

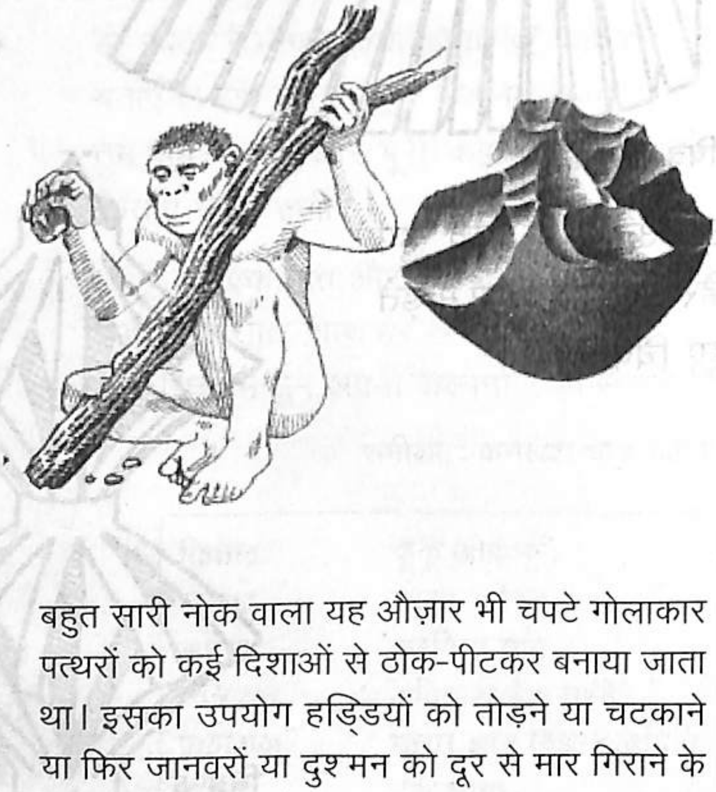

सबसे शुरुआती पत्थर का औज़ार है यह। यह आम तौर पर मुट्ठी के आकार के गोलाकार पत्थर से बनाया जाता था। इसका इस्तेमाल कई कामों में होता था - लकड़ी काटने के लिए, हड्डी तोड़ने के लिए या कभी आपस में झगड़ा हो जाए तो हथियार की तरह भी!

बहुत सारी नोक वाला यह औज़ार भी चपटे गोलाकार पत्थरों को कई दिशाओं से ठोक-पीटकर बनाया जाता था। इसका उपयोग हड्डियों को तोड़ने या चटकाने या फिर जानवरों या दुश्मन को दूर से मार गिराने के लिए किया जाता होगा।

यह एक और शुरुआती औज़ार है। इसमें एक बहुत नुकीला कोना होता है (ऊपर) और इसके दोनों किनारे बहुत धारदार होते हैं। माना जाता है कि इनका इस्तेमाल ज़मीन खोदकर कन्द और जड़ें निकालने के लिए किया जाता था। इस तरह के औज़ार को सीधे हाथ में पकड़कर और कभी-कभी लकड़ी या बाँस के आगे बाँधकर भी उपयोग में लाया जाता था।

यह चमड़ा साफ करने के काम आने वाला एक ब्लेडनुमा औज़ार है। बड़े औज़ार बनाने में पत्थर की कुछ चिप्पियाँ अलग निकल जाती थीं। उन्हीं में और धार बनाकर इस तरह के ब्लेड बनाए जाते थे। चित्र में ब्लेड के दाहिने किनारे को ध्यान से देखो। धार बनाने के लिए इसमें से बहुत सारी छोटी-छोटी चिप्पियाँ निकाली गई हैं।

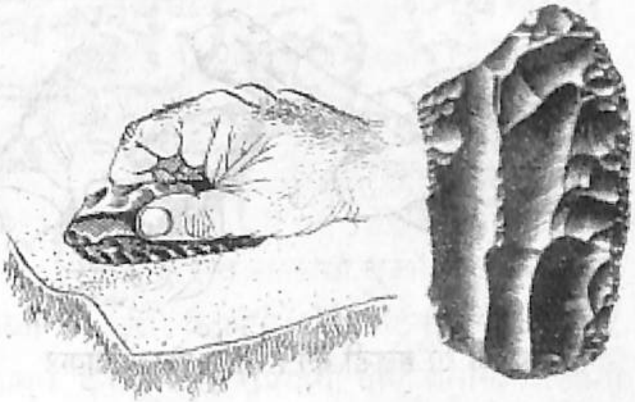

यह दाँतेदार औज़ार भी बहुत बारीक काम का नतीजा है। इसे शायद लकड़ी के दूसरे औज़ारों को आकार देने के लिए काम में लाया जाता था। कुछ लोग मानते हैं कि यह पहला ऐसा औज़ार था जिसका इस्तेमाल कोई दूसरा औज़ार बनाने के लिए किया जाता था।

यह औज़ार भी पत्थर की चिप्पी पर काम करके बनाया गया लगता है। इसका उपयोग चमड़े आदि में छेद करने के लिए किया जाता होगा। जानकार लोग बताते हैं कि जिन जगहों पर इस तरह के औज़ार मिलते हैं, माना जाता है कि वहाँ लोगों में कपड़े पहनने का प्रचलन शुरू हो गया होगा।

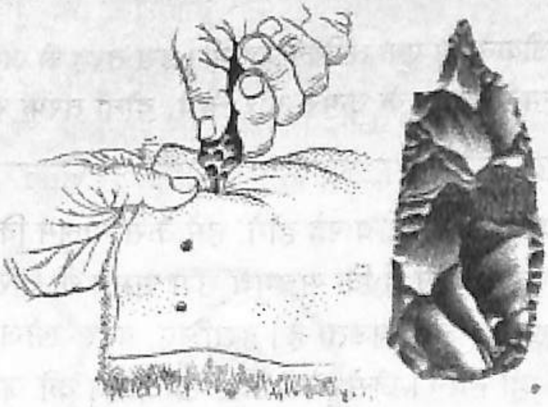

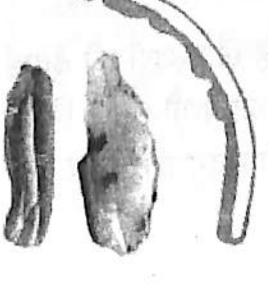

पत्थर से निकाली गई चिप्पी से बने ब्लेड। इस तरह की चिप्पियों का एक किनारा तो बहुत धारदार होता था, पर दूसरे किनारे को कुछ भोंथरा बनाया जाता था। इस तरह की कई ब्लेडों को लकड़ी पर एक के बाद एक लगाकर चाकू, दराती, हँसिया आदि बनाया जाता था। इनका इस्तेमाल हर तरह के काटने के काम में किया जाता था।

औज़ार बनाने के तरीके

यूँ तो इस तरह के औज़ार बनाना काफी मुश्किल काम है। बहुत हुनर और अभ्यास चाहिए इसमें। यहाँ हम तुम्हें उन चार तरीकों का परिचय भर दे रहे हैं, जिनसे आदिम युग के लोग औज़ार बनाया करते थे।

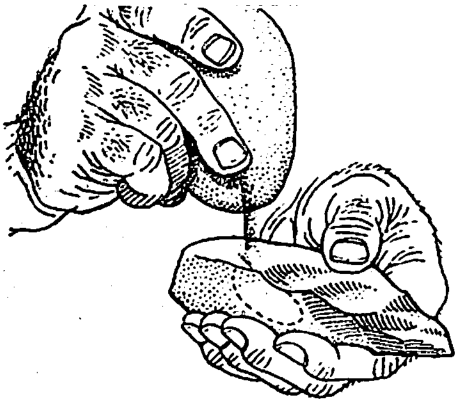

एक पत्थर को दूसरे से ठोककर

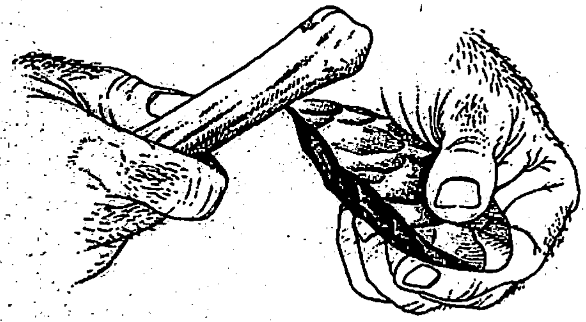

लकड़ी या हड्डी की हथौड़ी से तराशकर

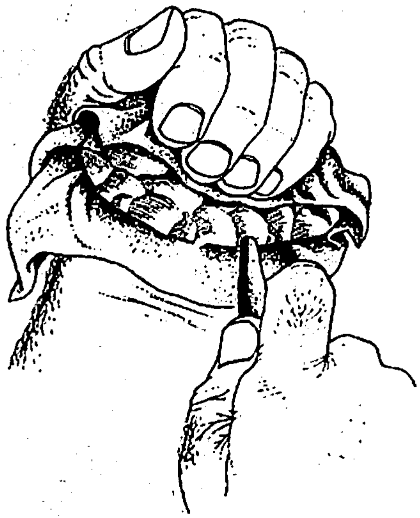

पत्थर को चमड़े में लपेटकर किसी नोकवाली हड्डी, सींग या लकड़ी से वार करके। पत्थर को इस तरह से पकड़ने से उसके फिसलने का डर नहीं रहता।

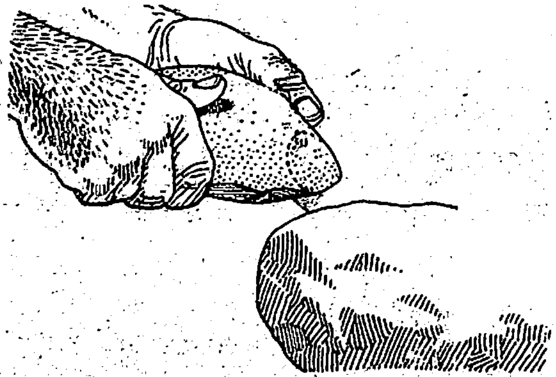

ठोकने का एक तरीका यह भी। इस तरह से ज़मीन में धँसे किसी पत्थर की मदद लेकर औज़ार वाले पत्थर के ऊपर और नीचे, दोनों तरफ से चिप्पियाँ उचटाई जा सकती हैं।

शायद तुम सोच रहे होगे, हमें कैसे मालूम कि इतने पहले कैसे-क्या होता था? सही सवाल है। ये सब इतनी पुरानी बातें हैं कि सचमुच उस समय के बारे में पता लगाने के लिए बहुत सारी अटकलों और अनुमानों का सहारा लेना पड़ता है। इसलिए, बहुत खोजबीन के बाद भी जो भी जानकारी हमें मिले, वह एकदम पक्की नहीं होती। जैसे-जैसे और खोजबीन की जाती है, हमारी जानकारी पुख्ता होती जाती है।

चलते-चलते तुम्हें एक और मज़ेदार बात बताएँ? तुम चाहो तो राह चलते भी इस तरह के पत्थरों की ढुँढाई कर सकते हो। हमारे आसपास सड़क किनारे भी कई बार ऐसे पत्थर मिल जाते हैं जो कभी हमारे किसी पूर्वज ने बहुत मेहनत से बनाया होगा। हाँ, इन्हें पहचानने में शुरू-शुरू में जानकारों की मदद और फिर कुछ अभ्यास की ज़रूरत ज़रूर पड़ती है।

चकमक समाचार

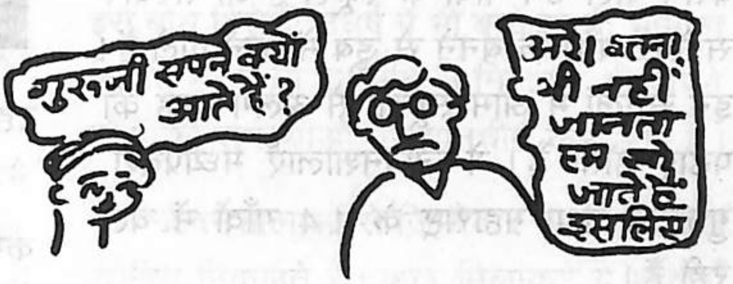

विज्ञान मेला सम्पन्न

भँवरगढ़ राजस्थान के बाराँ ज़िले का एक गाँव है। दिसम्बर के आखिरी हफ्ते में यहाँ एक विज्ञान मेला हुआ। विज्ञान मेला *दूसरा दशक* नाम की संस्था ने भँवरगढ़ के लोगों की मदद से किया। यह संस्था किशोर उम्र के लड़के-लड़कियों के लिए स्वास्थ्य, विज्ञान व शिक्षा से जुड़े मुद्‌दों पर काम करती है।

इस मेले में एकलव्य, संकल्प, चेतना जैसी संस्थाओं ने भी विभिन्न गतिविधियाँ आयोजित करके इस संस्था की मदद की।

मेले में करीब आठ सौ बच्चों ने भाग लिया। बच्चों को सस्ते खिलौने और कठपुतली से लेकर साबुन, कवेलू जैसी उपयोगी चीज़ें बनाना सिखाया गया। टीवी, कैमरा जैसी चीज़ें कैसे काम करती हैं, यह भी बताया गया। विज्ञान के प्रयोगों के अलावा कागज़ से खिलौने व मुखौटे भी बच्चों ने बनाए। भारत के विभिन्न राज्यों को जोड़कर भारत का नक्शा बनाने की भारत जोड़ो नाम की मज़ेदार गतिविधि भी बच्चों ने की। इसके अलावा साँपों के बारे में कई मज़ेदार जानकारियाँ दी गईं। विज्ञान के जादू नाम की जादू की गतिविधि हुई।

दिन भर की गतिविधियों के बाद रोज़ एक अखबार भी निकाला जाता था। शाम का वक्त सांस्कृतिक गतिविधियों के लिए तय था। गीत, नाटक के अलावा नृत्य इस कार्यक्रम के आकर्षण रहे।

रपटः कार्तिक शर्मा

एक और जीवनशाला

दो जनवरी को मध्यप्रदेश के बड़वानी ज़िले के खारिया-भादल गाँव में 14 वीं जीवनशाला शुरू हुई। जीवनशाला नर्मदा नदी के किनारे बसने वाले उन गाँवों के स्कूल हैं जो सरदार सरोवर बाँध के बनने से डूब में आने वाले हैं। इन स्कूलों में आम स्कूलों से अलग तरह की पढ़ाई होती है। ये जीवनशालाएँ मध्यप्रदेश, गुजरात तथा महाराष्ट्र के 14 गाँवों में चल रहीं हैं।

आज़ादी के बाद से इस क्षेत्र में कुछ स्कूल खुले तो थे। पर ये स्कूल सिर्फ कागज़ों पर ही थे। असल में गाँवों में न तो कोई स्कूल खुले, न कभी कोई शिक्षक पहुँचे। तब सन् 1991 में गाँववालों ने निर्णय लिया कि वे अपने बच्चों के लिए खुद के स्कूल खोलेंगे। लगातार बातचीत के बाद जीवनशाला नाम से अपने स्कूल शुरू किए गए। अब तक चल रहे इन 14 में से 4 जीवनशालाएँ आवासीय हैं। करीब चौदह सौ बच्चे इन शालाओं में खेल-कूद करते हुए, पढ़ना लिखना भी सीख रहे हैं। बच्चे अपने रहने के घर भी खुद अपने हाथों से बनाते हैं।

जीवनशाला का संचालन गाँव की एक कमेटी करती है। नर्मदा बचाओ आन्दोलन तथा अन्य संगठनों के सामाजिक कार्यकर्ता भी स्कूल के संचालन में सहयोग करते हैं। सभी गाँवों की एक मिलीजुली कमेटी सभी जीवनशालाओं का निरीक्षण करती है तथा उनके लिए पैसा वगैरह जुटाने का काम भी करती है।

ये सभी जीवनशालाएँ ऐसे क्षेत्रों में हैं जहाँ भिलाली भाषा बोली जाती है। इसलिए इन स्कूलों में पढ़ाई भी भिलाली में होती है। अब तक दो भिलाली किताबें भी तैयार की जा चुकी हैं। शिक्षक भी गाँव के युवक ही होते हैं। पाठ्यक्रम बनाते समय यहाँ के लोगों की मूल संस्कृति और पर्यावरण को ध्यान में रखा जाता है। खेती, बुनाई जैसे हुनर, आसपास के जंगलों के पेड़–पौधों की जानकारी व आदिवासियों की अपनी परंपरागत औषधियों की शिक्षा भी दी जाती है। साथ ही बाहरी दुनिया से सामना कर पाने की तैयारी भी जीवनशालाओं में कराई जाती है। इसके अतिरिक्त बच्चे सरकारी पाठ्यक्रम की पढ़ाई भी करते हैं।

तुमने शायद सुना होगा कि नर्मदा नदी पर एक बहुत बड़ा बाँध बन रहा है। इस बाँध के बन जाने पर ये सारे गाँव डूब जाएँगे। इनके घर, खेत, जंगल सब डूब जाएँगे। इसलिए यहाँ के लोग इस बाँध का विरोध कर रहे हैं। इस बाँध विरोधी संघर्ष में भी बच्चे खासी भूमिका निभाते हैं। वे तो राष्ट्रपति से मिलकर भी अपने गाँवों की समस्याओं पर बातचीत कर आए हैं।

हर साल जीवनशालाओं से पढ़ाई करने वाले बच्चे चौथी तथा आठवीं की प्रायवेट परीक्षा देते हैं। इनमें से ज़्यादातर बच्चे हर साल प्रथम श्रेणी में परीक्षा उत्तीर्ण करते हैं।

जीवनशाला के बच्चे समाज के साथ सरोकार भी रखते हैं। डोमखेड़ी गाँव में तो इन बच्चों ने कुछ बाहर के मित्रों की मदद से बिजली बनाने जैसा बड़ा काम भी किया है। पच्चीस घरों में तथा गलियों की बिजली व्यवस्था गाँव में ही बनने वाली बिजली से हो रही है।

जीवनशालाओं से ज़िम्मेदार व संवेदनशील व्यक्ति निकलते हैं। कुल मिलाकर ये शालाएँ समाज को सशक्त करने में अपनी ज़िम्मेदारी निभा रही हैं।

क्या तुमने कभी ऐसे कोई स्कूल देखे हैं जहाँ की पढ़ाई आम स्कूलों से अलग होती है? अगर देखा हो या जानते हो तो हमें उसके बारे में लिखना। हम चकमक के माध्यम से तुम्हारे और दोस्तों को भी बताएँगे।

रपट : शिवनारायण गौर

फॉर्म 4 (नियम – 8 देखिए)

मासिक चकमक बाल विज्ञान पत्रिका के स्वामित्व और अन्य तथ्यों के सम्बंध में जानकारी

प्रकाशन का स्थान	:	भोपाल
प्रकाशन की अवधि	:	मासिक
प्रकाशक का नाम	:	विनोद रायना
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	एकलव्य, ई–7/एच आई जी 453, अरेरा कॉलोनी, भोपाल – 462 016
मुद्रक का नाम	:	विनोद रायना
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	एकलव्य ई–7/एच आई जी 453, अरेरा कॉलोनी, भोपाल – 462 016
सम्पादक का नाम	:	विनोद रायना
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	एकलव्य, ई–7/एच आई जी 453, अरेरा कॉलोनी, भोपाल – 462 016
उन व्यक्तियों के नाम और पते जिनका इस पत्रिका पर स्वामित्व है	:	रेक्स डी. रोज़ारियो भारतीय एकलव्य, ई–7/एच आई जी 453, अरेरा कॉलोनी, भोपाल – 462 016

मैं विनोद रायना यह घोषणा करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं।

1 जनवरी 2004

विनोद रायना
(प्रकाशक के हस्ताक्षर)

माथापच्ची

1.

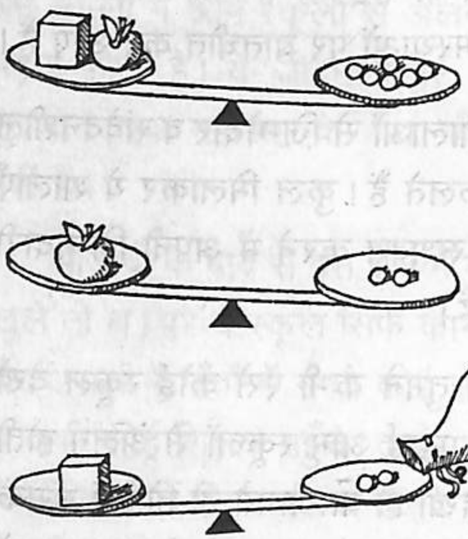

यहाँ एक तराजू, एक सेब और खूब सारे लड्डू हैं। मज़ेदार बात यह है कि सारे के सारे लड्डू इतने एक समान हैं कि उनका वज़न भी बराबर है। अब हमारे तराजू की तीन स्थितियों के चित्र देखो। पहली स्थिति में तराजू के एक पलड़े में एक डिब्बा और एक सेब है, और दूसरे पलड़े में छह लड्डू रखे हैं। तराजू संतुलन की स्थिति में है।

ऐसे ही दूसरी स्थिति में भी तराजू संतुलन की स्थिति में है। इसके एक पलड़े में एक सेब रखा है और दूसरे पलड़े में दो लड्डू रखे हैं।

तीसरी स्थिति में तराजू के एक पलड़े में वही एक डिब्बा रखा है और दूसरे पलड़े में दो लड्डू रखे हैं। ज़रा गुणा भाग करो! क्या तीसरा तराजू संतुलन की स्थिति में है? अगर नहीं है तो इसे संतुलित करने के लिए दूसरे पलड़े में कितने लड्डू रखने होंगे?

2.

क्या बगैर पेंसिल उठाए तुम यह आकृति बना सकते हो?

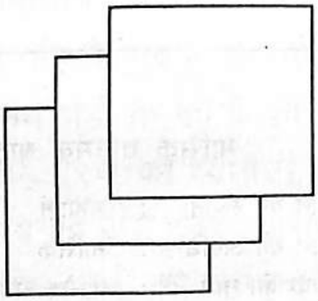

3.

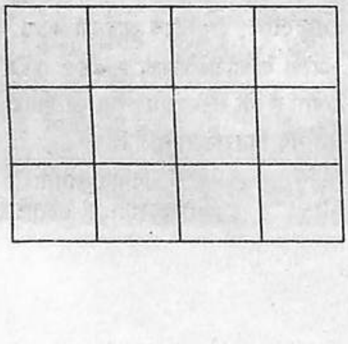

इस खाने को देखो! कुल मिलाकर नौ लाइनें हैं इसमें! गिन कर देखो, इस आकृति में बीस वर्ग छुपे हैं। बीस वर्ग वाली आकृति बनाने के लिए कम से कम नौ लाइनें चाहिए। ज़रा ये बताओ कि अगर हमें सौ वर्ग की आकृति बनाना हो, तो कम से कम कितनी लाइनों की ज़रूरत पड़ेगी?

4.

सेही अपने घर के बाहर बाड़ बनाने में लगी है। अभी तक वो सात खम्भे लगा चुकी है। दो खम्भों को तीन फुट की एक पट्टी जोड़ रही है। दो पट्टियाँ आपस में एक दूसरे को छूती हैं। क्या तुम बता सकते हो कि यहाँ दिख रही बाड़ की कुल लम्बाई कितनी होगी?

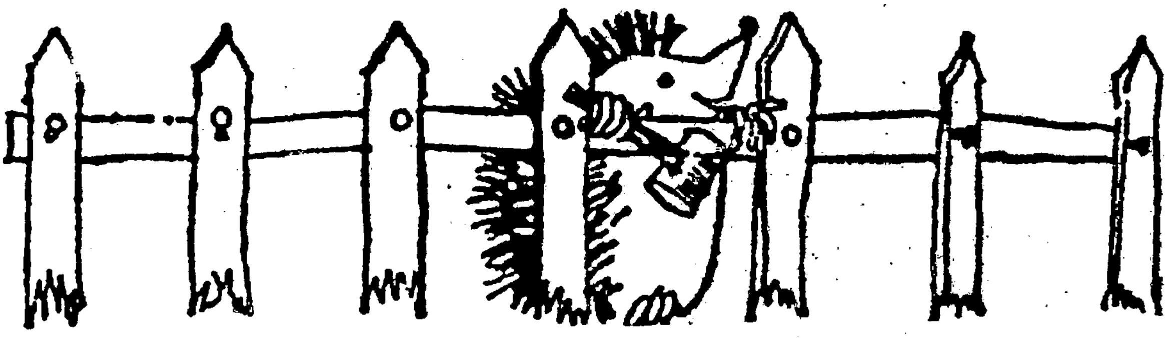

5.

तलक, नमक, कलम, ... ऐसे कितने ही शब्द होंगे! क्या खासियत है इनमें? हाँ, एक तो ये सभी तीन अक्षरों से मिलकर बने हैं। दूसरे इनके अक्षरों को जोड़कर कई और शब्द बना सकते हैं। जैसे तलक से... तक, कल, तल, लत, तलक! है न! क्या तुम इसी तरह के दस और शब्द ढूँढ सकते हो?

6.

इन पाँच आकृतियों को गौर से देखो। इनमें से दो आकृतियाँ नीचे के दोनों चित्रों में छुपी हैं। क्या तुम बता सकते हो कि वो कौन सी हैं?

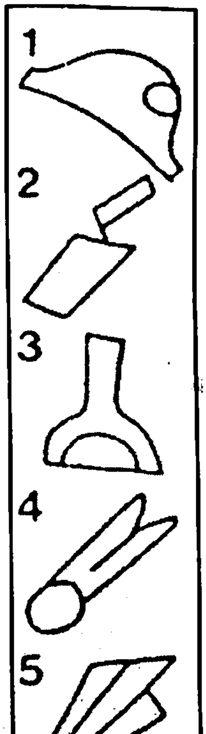

चूहे

हज़ारों साल पहले तक चूहे केवल मध्य एशिया में ही पाए जाते थे। फिर धीरे-धीरे पूरे यूरोप और फिर सारी दुनिया में फैल गए। अब तो अंटार्टिका में भी चूहे पाए जाते हैं। चूहे पूरी दुनिया में कैसे पहुँचे होंगे? शायद पानी के जहाज़ पर सवारी करके या किन्हीं और तरीकों से।

चूहे जल्दी ही किसी भी माहौल में रहना सीख लेते हैं। कुछ चूहे पानी में भी अपना घर बनाते हैं। भूरे चूहे, जो पानी में रहते हैं या पानी के आसपास रहते हैं, बहुत अच्छे तैराक होते हैं। वे अपने पंजों को पतवार की तरह इस्तेमाल करके तैरते हैं। तैरने के साथ-साथ वे पानी के अन्दर गोता भी लगा सकते हैं।

आमतौर पर ऐसा सोचा जाता है कि चूहे बहुत गंदे होते हैं। लेकिन ऐसा है नहीं। वे बहुत साफ रहते हैं। चूहे अपने दाँतों को कंघे की तरह इस्तेमाल करके अपने रोएँदार शरीर की सफाई करते हैं। अपने नुकीले नाखूनों से मरी हुई चमड़ी और जुएँ निकालते हैं।

सिर के ऊपरी हिस्से और गर्दन को साफ करने के लिए चूहे अपने अगले पंजों का इस्तेमाल करते हैं।

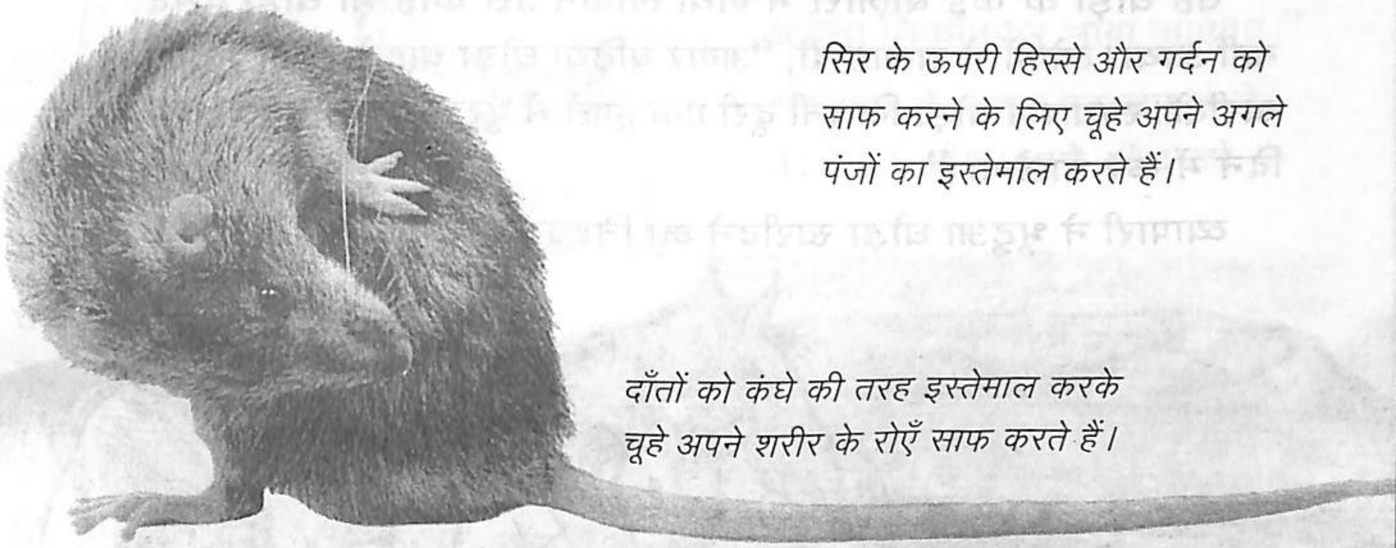

दाँतों को कंघे की तरह इस्तेमाल करके चूहे अपने शरीर के रोएँ साफ करते हैं।

मुँह और अगले पंजों से शरीर के अन्दरूनी हिस्सों की सफाई करते हैं।

प्रस्तुति : कविता सुरेश

एक बांग्लादेशी लोककथा

घोड़े का अंडा

बहुत समय पहले एक अमीर व्यापारी था। उसका व्यापार दिनों-दिन बढ़ता जा रहा था। उसे अक्सर दूर-दूर का सफर करना पड़ता था। इसलिए उसे एक बढ़िया, मज़बूत घोड़े की ज़रूरत थी।

वह घोड़ों के कई बाज़ारों में गया लेकिन उसे कोई भी घोड़ा पसंद नहीं आया। लोगों ने सलाह दी, "अगर बढ़िया घोड़ा चाहते हो तो भुट्ठआ खरीदो। साधारण घोड़ा जितनी दूरी एक हफ्ते में पूरा करेगा, भुट्ठआ एक दिन में कर डालेगा।"

व्यापारी ने भुट्ठआ घोड़ा खरीदने का निश्चय कर लिया।

क्यों नहीं करते? मेरे पास भुट्टुआ घोड़े के अण्डे हैं। एक अण्डा ले जाइए। इसमें से जल्दी ही बच्चा निकल आएगा - खूबसूरत और तगड़ा।"

"कितना दाम है एक अण्डे का?" व्यापारी ने पूछा।

"सिर्फ एक हज़ार टका, हुजूर।"
(बांग्ला देश की मुद्रा को टका कहते हैं)

व्यापारी ने एक खूब बड़ा, पीला कद्दू खरीद लिया। ठग ने कहा, "हुज़ूर, अण्डे को कंधे पर ही उठाए रखिएगा। नहीं रखेंगे तो बछेड़ा निकलकर भाग जाएगा।"

व्यापारी ने कद्दू उठाकर कंधे पर रखा और अपने गाँव को

वह घोड़े की सबसे बड़ी मंडी में गया। वह इधर-उधर घूम रहा था कि एक ठग, जो कद्दू बेच रहा था, ताड़ गया कि इसे आसानी से ठगा जा सकता है। उसने आवाज़ दी, "हुज़ूर, क्या ढूँढ रहे हैं? क्या चाहिए आपको। मैं बड़ी देर से हुज़ूर को देख रहा हूँ। मैं कोई मदद कर सकता हूँ?"

"हाँ दोस्त, मुझको भुट्टुआ घोड़े की तलाश है। बता सकते हो कहाँ मिलेगा?"

"हुज़ूर! भुट्टुआ घोड़ा पहले तो आपको मिलेगा नहीं। मिल भी गया तो बहुत ज़्यादा कीमत होगी। आप एक काम

चला। सूरज डूब गया था और अंधेरा होने लगा था। व्यापारी चलता-चलता थक गया था। उससे अब और नहीं चला जा रहा था।

उसने कद्दू को पीपल के बड़े पेड़ के नीचे रख दिया, और उसके तने पर पीठ टिकाकर सुस्ताने लगा। उसने अपने चेहरे और शरीर से पसीना पोंछा, और आराम करने के लिए आँखें मूँद लीं। उसी समय एक लोमड़ी दौड़ी आई। उसने कद्दू को देखा तो शायद उसको कौतूहल हुआ और उसने ज़ोर से उस पर पंजा मारा। कद्दू फट गया। डरकर लोमड़ी भागी।

लोमड़ी के भागने से व्यापारी की आँख खुल गई। उसको एक जानवर भागते दिखा तो समझ बैठा कि अण्डा फूट गया और घोड़े का बछेड़ा भाग निकला। वह उसके पीछे भागा। कहने लगा, “अगर यह पैदा होते ही इतनी तेज़ी से भाग सकता है तो बड़ा होने पर कितनी तेज़ भागेगा, मैं यह सोच भी नहीं सकता।”

आज तक किसी ने लोमड़ी का इस तरह पीछा नहीं किया था। वह डरकर भूसे के ढेर में छिप गई। व्यापारी भूसे के ढेर पर डंडा मारने लगा।

संयोग से उसी ढेर में एक शेर भी था। डंडा शेर को लगा। वह बाहर निकलकर भागा।

शेर को दौड़ते देख व्यापारी भी उसके पीछे भागा। दौड़ते-दौड़ते शेर थक गया था। व्यापारी उसके पास पहुँचा। उस पर चढ़कर बैठ गया। उसने शेर की पीठ थपथपाकर कहा, “बेटे, अब और शैतानी मत करना। अब अच्छे बेटे बनो और मुझे जल्दी घर पहुँचा दो।”

रात बीत गई। पौ फटी। जब व्यापारी ने सुबह की रोशनी में देखा कि वह किस पर सवार है तो उसकी जान निकल गई।

शेर दौड़ता रहा। व्यापारी को अब किसी तरह अपनी जान बचाने की चिंता थी। वह एक पेड़ की नीची डाली को पकड़कर लटक गया।

जान तो बच गई पर भुटुआ नाम से चिढ़ हो गई। यह शब्द सुनते ही वह आपे से बाहर हो जाता।

अब वह सिर्फ यही चाहता था कि ज़िंदगी भर उसको भुटुआ शब्द याद न आए।

सभी चित्र : संतोष श्रीवास्तव

बैठे वे दम साध

भोलू टी वी से नाराज़।
उस कमरे में गए तक नहीं आज॥

आँखें टेस्ट करा के लौटे
बूढ़ों सी कमज़ोर
कानों में है दर्द
भरा है विज्ञापन का शोर
कान सफाई करने वाला बोला
भोलूराम! इसे निकालें कैसे
यह तो भीतर तक घनघोर।

पापा जी रिज़ल्ट लाए हैं
गुस्से में आए हैं
भोलू छुपे हुए बैठे हैं
खुद से शरमाए हैं
अम्माँ ढूँढ रही हैं उनको
बैठे वे दम साध।

● नवीन सागर
चित्र ● कैरन हेडॉक

माथापच्ची दिसम्बर 2003 के हल

2.

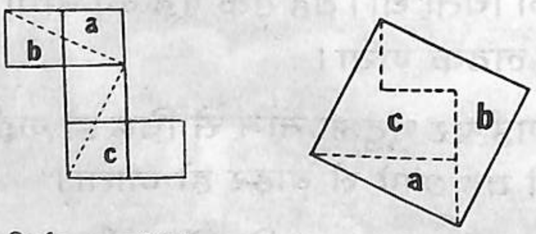

3. सिर्फ फरवरी! है न।

5. 17 18 19

दिसम्बर अंक की वर्ग पहेली के हल

ग	ज	रा	ज		ना	रि	य	ल
र			ग	ण	क			ट
द	ड़	बा				गु	ल्ल	क
न		र		ची	त	ल		ना
	छ	ह				मो	र	
ता		सिं	घा	ड़ा		ह		क
प	तिं	गा				र	ह	ट
मा			पा	लि	का			ह
पी	क	दा	न		क	र	त	ल

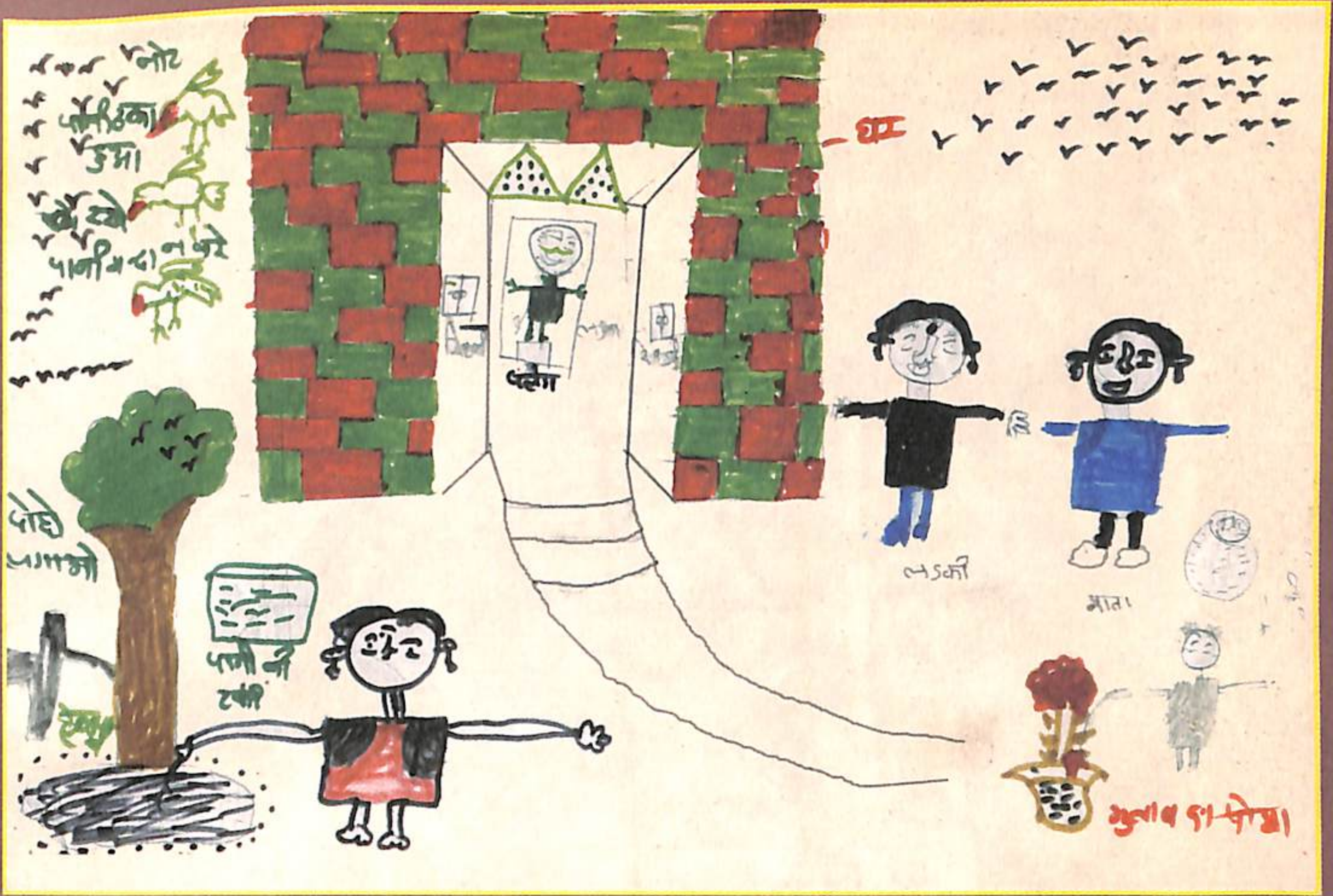

अफसाना बी, आठवीं, धार, म.प्र.

राजेश, छठी, उज्जैन, म.प्र.

चकमक पंजीयन क्रमांक 50309/85 के अंतर्गत भारत के समाचार पत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा पंजीकृत। डाक पंजीयन क्रमांक म.प्र./261/भोपाल/2003

नीलम जैन, छठवीं, उज्जैन, म.प्र.

रैक्स डी. रोज़ारियो की ओर से विनोद रायना द्वारा राजकमल प्रिंटर्स से मुद्रित एवं एकलव्य, ई-7/एच.आई.जी. 453, अरेरा कॉलोनी, भोपाल 16 से प्रकाशित। संपादक : विनोद रायना